

प्रत्यक्ष प्रभावक पुज्य गुरुमहाराज



गान्धी बोधरा के पुत्र सुखलाठीजी की धर्मपत्नी बेरागन चचन्द्रवार तरफमे  
गाम सागालाव (नाणेर)  
मसन १८७६ सरमा दीशा सन १९०८ जयपुर \* स्वग सवत १९४२ फलोद

## प्रस्तावना ।

जैन धर्म निवृत्ति प्रधान है । उसके उपदेष्टा तीर्थंकरों ने आत्मा और कर्म का स्वरूप बहुत विस्तार से वर्णन करते हुए प्रत्येक प्राणी सासारिक भोग विलासों से अलग होकर आत्मस्वरूप में प्रवर्धित होने से परमात्मस्वरूप बन सकता है, इसी पर जोर दिया है । जैन धर्म में ईश्वर या परमात्मापद प्राप्ति का ठेका किसी एक ही व्यक्ति का नहीं मानते हुए प्रत्येक प्राणी को अपने पुरुषार्थ द्वारा मोक्ष प्राप्त कर सकने का विधान है । अतः जैन दृष्टिकोण से तीर्थंकरों का वदन, पूजन और भक्ति उन्हें सुश करने के लिए नहीं पर स्वस्वरूप की प्राप्ति में वे निमित्त कारण हैं यही मान कर की जाती है । उनके दर्शन, वदन व भक्ति से हमें अपने परमात्म-स्वरूप का ज्ञान व भान होता है और उनके बतलाये हुए मार्ग पर चलने से आत्मा परमात्मा बन सकती है । इसीलिये उनके गुणानुवाद रूप हजारों स्तुति-स्तवन जैन कवियों ने बनाये हैं जिनमें से भक्ति के साथ गभीर तत्त्व विचारणामय चौईस तीर्थंकरों के स्तवनों में श्रीमद् आनन्दघनजी की चौबीसी के बाद श्रीमद् देवचन्द्रजी रचित चौबीसी, बीसौ एव अतीत चौबीसी का उल्लेखनीय स्थान है ।

श्रीमद् देवचन्द्रजी उत्तर-गच्छ के विद्वान थे । आपका जन्म बीकानेर के निकटवर्ती ग्राम में स० १७४६ में हुआ था । स० १७५६ में आपने दीक्षा ग्रहण की । प्रारम्भ से ही आपका मुकाब आध्यात्मिक ज्ञान की ओर अधिक रहा फलतः २० वर्ष की यौवनावस्था में आपने वैराग्य और आध्यात्मिक रस से सराबोर “ध्यानदीपिका चौपाई” नामक ग्रन्थ की रचना की । स० १७६६ से स० १८१२ तक, जहाँ तक आप जीवित रहे—निरंतर जैन तत्त्वज्ञान और आध्यात्मिक विषयों पर ग्रन्थ रचना करते रहे । उन सब का समूह श्रीमद् बुद्धिसागर सूरिजी ने करवा कर आध्यात्म ज्ञान

प्रसारक मण्डल पादरा की ओर से श्रीमद् देवचंद्र भाग १ व २ के रूप में प्रकाशित करवाया है।

श्रीमद् देवचंद्रजी के वर्तमान चौबीसी के स्तवनों पर तो स्वयम् रचित त्रिभुवन बालावबोध-भाषा टीका प्रकाशित है। पर अतीत चौबीसी और बीसी पर विवेचन प्राप्त न था, इसी कमी की पूर्ति आध्यात्मरसिक भावकवर्य मनसुखलालजी एम् सतीकचन्द्रजी ने की है। अतीत चौबीसी के तो २१ स्तवनों ही उपलब्ध हैं, अतः मनसुखलालजी ने अतः ये ३ स्तवनों की रचना स्वयं करके सब पर स० १९६५ दाहोद ग्राम में बालावबोध रूप व्याख्या बनाई और वहींके सहयोगी शिष्य सतीकचन्द्रजी ने स० १९६६ में वहीं बीसी पर बालावबोध बनाया। इन दोनों को स० १९६७ में सतीकचन्द्रजी ने 'सुमति प्रकाश' नामक ग्रंथ में प्रकाशित भी कर दिया। उक्त ग्रंथ में अन्य रचनाएँ भी सम्प्रेषित होने से ग्रंथ बड़ा है एवं अप्राप्य भी है। अतः विदुषी आर्या नामानुरूप गुणवती श्री विचक्षणश्रीजी ने श्रीमद् देवचंद्रजी की इन दोनों रचनाओं को बालावबोध सहित स्वतंत्र ग्रंथ रूप में प्रकाशित करना आवश्यक समझा और वहीं के प्रयत्न से यह प्रथम पुस्तक प्रकाशित हो रही है एवम् दूसरी का मुद्रण चालू है।

इस ग्रंथ के प्रकाशन में श्री रञ्जनविजय पुस्तकालय की ओर से रु० ५००) और तोलारामजी माणकचंदनी सेठी की ओर से माणकचंदनी की धर्मपत्नी छगनबाई के नवपद उद्यापन के उपलक्ष्य में रु० ३००) सहायता प्राप्त हुए हैं। अतः ये दोनों द्रव्य सहायक धन्यवाद के पात्र हैं। आशा है अन्य सज्जन भी इसी प्रकार की उदारता दिखाकर ऐसे ग्रंथ रत्नों को सर्वजन सुलभ बनाने में सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

अगरचन्द्र नाइटा।

# सुविहिताग्रणी स्व० मुनिवर्य सुखसागर जी का जीवन परिचय

महापुरुषों का नाम स्मरण ही महामाङ्गल्यप्रद माना जाता है। जन साधारण के जीवनस्तर को ऊचा उठाने में महापुरुषों का जीवनचरित्र जितना उपयोगी होता है अन्य कोई भी साधन नहीं होता। शास्त्रात्मक मार्ग दिग्गते हैं और उन आदर्शों के उदाहरण महापुरुष अपनी जीवनी द्वारा उपस्थित करते हैं। अतः उनसे अधिक एव सद्य प्रेरणा मिलना स्वाभाविक ही है। यही कारण है कि प्रत्येक आस्तिक व्यक्ति महापुरुषों के नाम स्मरण भक्ति एव पूजादि द्वारा अपने को कृतकृत्य होने का अनुभव करता है।

जैन धर्म में समय समय पर अनेक महापुरुष हुए हैं जिनमें से कईयों का प्रभाव तो अपने समय तक ही अधिक रहा और कईयों का दीर्घकाल तक उनके शिष्य-सतति द्वारा लोकोपकार होता रहा है। यहाँ जिन महापुरुष का परिचय कराया जा रहा है वे द्वितीय प्रकार के हैं। उनकी पुण्य परम्परा में आज भी दर्शन से अधिक साधु व २०० के लगभग साध्वियों का विशाल परिवार विद्यमान है जोकि स्थान स्थान पर विहार कर स्वपरोपकार कर रहे हैं। इन महापुरुष का शुभ नाम मुनिवर्य सुखसागरजी था।

श्वे० जैन समाज में सुविहितशिरोमणि जिनेश्वर सूरिजी की सतति सरतर गच्छ के नाम से प्रसिद्ध है। इस गच्छ में १८वीं शती में जिनभक्तिसूरिजी नामक आचार्य हो चुके हैं उनके शिष्य प्रीतिसागरजी के शिष्य अमृतधर्म के शिष्य क्षमाकल्याणजी १८वीं शती के नामाङ्कित विद्वानों में से हैं आपने तत्कालीन

शिक्षिताचार से अपने को उचा उठाकर सुविहित मार्ग में नव चेतना का संचार किया था। जन साधारण के उपकार के लिये आपने अनेक उपयोगी ग्रन्थों की रचना की थी। आपके शिष्य धर्मानन्दजी के शिष्य राजसागरजी से चरित्र नायक ने दीक्षा ग्रहण की थी और उनके शिष्य ऋद्विसागरजी के शिष्य रूप में आप प्रसिद्ध हैं।

स्वर्गीय मुनिवर्य श्री मुखसागरजी का जन्म स० १८७६ में सरस्वती पत्तन (सरसा) नामक स्थान में हुआ था। आपके पिताश्री का नाम मनसुखलालजी व मातुश्री का नाम जेती बाई था। श्रीसवाल जाति के दूगाड़ गोत्र के आप रहते थे। आपके यौवनावस्था में प्रवश से पूर्व ही माता पिता दोनों का वियोग ही गया अतः अपनी बहिन के आग्रह से ये जयपुर में आ गये व गोलछा माणिकचन्दजी, लक्ष्मीचन्दजी की सहायता से क्रियाणु का व्यापार करने लगे। थोड़े समय में ही अपनी व्यवहार कुशलता से आप उनके यहां मुनीम जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर सुशोभित हो गये।

बाल्यावस्था से ही आप की रुचि धर्म ध्यान को ओर विशेष थी इसीसे पिताश्री के अनुरोध करने पर भी आपने विवाह करना स्वीकार नहीं किया था व सामायिक पूजा, तर्करचर्यादि में सलग्न रहते थे। स० १९०६ में जयपुर में मुनि श्री राजसागरजी व ऋद्विसागरजी का चातुर्मास हुआ। फलतः आपकी धर्मभावना के सींचन का शोभन सुयोग प्राप्त हो गया। अपनी चढती भावना से आपने मुनिश्री से साधु धर्म स्वीकार करने की उत्कृष्ट प्रगट की। वहीने भी आपको वैराग्यवान् व दीक्षा की उत्कृष्ट भावना याला ज्ञात कर चातुर्मास होने पर भी आपके आग्रह को स्वीकार किया।

नियमानुसार अपने निकट सबन्धियों से चारित्र धर्म स्वीकार करने की अनुमति प्राप्त कर ( भाद्र सु० ५ ) साम्बत्सरिक क्षमत्-क्षामणा के माङ्गलिक पर्व के दिन गुरुश्री के पास आपने दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा का महोत्सव उपर्युक्त गोलछा परिवार ने किया । मुनिवर्य राजसागरजी ने प्रवज्या ग्रहण कराते हुए आपको मुनि श्री ऋद्धिसागर का शिष्य व दीक्षा नाम सुलसागर घोषित किया ।

साध्वाचार की समुचित शिक्षा के अनंतर मार्गशीर्ष मास में आपकी बड़ी दीक्षा भी हो गई । अब आप जैन सिद्धांत के विशेष अध्ययन में सलग्न हो गये और थोड़े समय में ही जैनागमों में दक्षता प्राप्त करली ।

आगम वाचना के समय शास्त्रोक्त साधु जीवन से अपने वर्त्तमान जीवन की तुलना करने पर शिथिलता नजर आई अतः साध्वाचार की ही खप होने से आपने मुनि पद्मसागरजी व गुणवन्तसागरजी के साथ गुरुश्री से अलग हो कर सं० १६१८ सिरौही में क्रिया उद्धार कर लिया । तदनंतर सुविहित मार्ग का प्रचार व तप सयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए सर्वत्र विहार करने लगे । अनुक्रम से तीर्थाधिराज शत्रु जय की यात्रा कर के आप फलीधी पधारे ।

इधर साध्वीजी रूपश्रीजी की शिष्या उद्योतश्रीजी शिथिलाचार से सम्यक् विच्छेद कर सं० १६२२ में फलीधी आई और आपको योग्य सुविहित गुरु ज्ञान कर आप से वासन्तेप लेकर आज्ञानुवर्तिनी हो गई । सं० १६२४ में लक्ष्मी आई दीक्षित होकर उनकी लक्ष्मीश्रीजी के नाम से शिष्या हो गई । सं० १६२६ में भगवानदास श्रावक ने गुरुश्री से दीक्षा ग्रहण की और भगवानसागरजी के नाम से वे प्रसिद्ध हुवे ।

|    |                          |     |
|----|--------------------------|-----|
| १८ | श्री जशोधर जिन राज स्तवन | १२३ |
| १९ | श्री कृतार्थ जिन स्तवन   | १२६ |
| २० | श्री धर्माश्वर जिन स्तवन | १३६ |
| २१ | श्री शुद्धमती जिन स्तवन  | १४६ |
| २२ | श्री शिवकर जिन स्तवन     | १५० |
| २३ | श्री ह्यदन जिन स्तवन     | १७१ |
| २४ | श्री संप्रति जिन स्तवन   | १८० |



॥ ॐ परमगुरुभ्यो नम ॥

॥ महोपाध्याय देवचंद्रजी कृत  
अतीत स्तवन चौवीशी बालावबोध ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

॥ दोहरा ॥

जिन गुण कीर्त्तन करि करो,

आत्म कीर्त्ति अनत ॥

शुद्धात्मता ध्यावता,

लह निज पद सुमहत १ ॥

अतीत समयमां जे हुवा,

तीर्थपती श्रीवीश ॥

तस गुण स्तवि भविजन लहो,

सहजात्म सुजगीश ॥ २ ॥

शुद्ध भ्येय ध्याता लहे,

धर्म शुफल शुभ ध्यान ॥



परमात्म पूजा करो,

भवि निज सिद्धि विधान ॥ ३ ॥

विघन हरण मंगल करण,

जम अतिशय घउतीश ॥

तस पद सेवी भवि रहो,

धर्म मग्न निशदीन ॥ ४ ॥

अक्षय आत्म सपदा,

आत्म पीर्य अन्त ।

सहज स्वतन्त्र प्रयास विण,

प्रगटे शांति अलगत ॥ ५ ॥

॥ अथ प्रथम तीर्थकर श्री केवलज्ञानी

जिन स्तवन ॥

नामै गाजे परम आल्हाद, प्रगटे अनुभव

रस आस्वाद । तेथी थाये मति सुप्रसाद,

सुणता भोजेरे काई विषय विपादरे ॥ जिणदा

ताहरा नामथी मन भीनो ॥ १ ॥

अर्थ - जेना नामथा भवि जीवोना हृदयमा  
परम आल्हाद गाजी रहे छै, घणे भुवनना जायो

सिद्ध समान पोतानु शुद्ध स्वरूप अणुजापना  
 सङ्गण, पङ्गण, विध्यसण धर्मी अपवित्र-देहना  
 पोतापणु जाणी मानी जन्म, जरा, मरणादि आवि  
 ष्याधि अहंपणे भोगक्षता अने मिथ्यात्व, अविनि,  
 प्रमाद, कृपाय वशे कर्मव्यकरताने प्रभुजीसिद्ध समान  
 निर्मल ज्ञान दर्शन चरण चारित्र्य वीर्यमय स्वतंत्र  
 अजर अमर अक्षय अनंत आनंदमय शुद्धात्म स्व  
 रूप वतावे, तेज आत्म अनात्म लक्षण भिन्न सङ्ग  
 जता, रुची प्रतीत धता, भविजीवोना हृदयना  
 परमानंद प्राप्ति थाय छे वली रागादि दोषा स्ये  
 निर्मल शाश्वत ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि पोताना  
 अनंत शुद्ध शक्तियो अनुभव आस्वाद स्वतंत्र अणु  
 प्रगटे छे एज परम आल्हाद गाजे छे. ता  
 पचन सामलता विषय अने कृपायोतो प्रियाद  
 दूर भागे अने प्रशमतानो आनंद आवे अणुजा  
 पारमा अने तेरमा गुणस्थानवामी सामान्य अणु  
 ईंद्र सरग्वा शासन नायक तमारा  
 मन आश्चर्य पासे छे, माहरू मन प्रभुना  
 मृत पचन रसे भीनु छे ॥ १ ॥

क्षेत्र असुर्य प्रदेश, अनंत पर्याय निवेश ॥  
जाणग शक्ति अशेष, तेहथी जाणरे कांडे  
सकल विशेषरे ॥ जिण ॥ २ ॥

अर्थ - प्रात्म द्रव्यना प्रदेश, लोकाकाशना  
अमन्याना प्रदेशमा विस्तरी शके ते ते स्वप्रति  
प्रदेशे ज्ञानादि अनंत गुणोना छति पर्यायो अनता  
नता निरो भावे रच्या ते ते परिणामिक धर्म बडे  
एवद गुण हाणि वृद्धिपणे पर्यायो दर समये सामर्थ्य  
पणे परिणमि थाप थापणा कार्यपणे उर्ध्वताण  
आची परिणमे ते तेमा आधिर्भावपणे थया जे  
ज्ञान पर्यायो ते बडे रूपा अरूपी सकल ज्ञेयनी  
त्रिकालवती दर निकटनी सकल प्रवृत्तिना जाण ते  
माटे जाणवापणानी शक्ति अने व्यक्ति अशेष छे  
एटले अनंत द्रव्यना अनंत क्षेत्रना अनंत कालना  
अने अनंत भावना प्रभुजी विशेष गुणे करी जाता  
छो तेथी कोई पण ज्ञेय तमारा जाणवामा नाही  
रहेतो नथी ॥ २ ॥

सर्व प्रमेय प्रमाण, जस केवल नाण  
पहाण ॥ तिणे केवलनाणी अभिहाण, जस  
ध्यावेरे काई सुनिवर ज्ञाण रे ॥ जिण ॥३॥

अर्थः—स्वरूप प्रमेय प्रमाण केहतां पचास्ति द्रव्य  
हे तेमा धर्मास्ति अर्मास्ति अने आकाश ए एक  
एक द्रव्य हे अने जीव पुद्गल अनतानंत द्रव्य हे  
अने त्रिकालना समय अनता हे. तेमाथी कोई  
द्रव्य बरे नहीं तेम घटे पण नहीं णटले नबो उपजे  
नहीं, अने जे द्रव्यमा जेटला छति पर्याय हे ते  
पर्यायमाथी कोई पर्याय बरे नहीं तेम घटे पण  
नहीं, पर्याय उत्पाद व्ययपणे परिणमे पण सत्ताए  
जेटला गुणो अने जेटला पर्यायो हे नेटलाज गहे  
जीव द्रव्यना गुण पर्याय जीव कार्य करे अने  
पुद्गल द्रव्यना गुण पर्याय पुद्गल कार्य करे ए  
कोई द्रव्य अन्य द्रव्यना कार्यने कर नहीं,  
घस्तुनां जे स्वभाव हाय तेमा जे पर्यायनी  
जे समये आवधानी होय तेज समये आवे,  
पोतानो काम छोडे नहीं चली जेमा जे भक्ति  
होय अगरे जेने जेनो योग ध्यानो होय

योग थाय, ए आदि द्रव्य गुण पर्याय आप आपणी  
 मर्यादा छोडे नहीं तेने प्रमेय कहीए एम सकल  
 प्रमेयनु प्रमाण करनार प्रभुजीनु प्रधान केवलज्ञान  
 छे तेथीज प्रभुजी तमारू केवलनाणी एहुं नाम छे  
 जेने प्रधान मुनिओ रुदा मन बचन कायाना जोगो  
 धिर राखी ध्यानमा भ्याय छे एटले तमारा शुद्ध  
 गुणो चार चार मनाली ध्यानाग्नि धमी तुम सरखा  
 गुणा आत्म अगमा अभेदपणे ध्याई कर्मरूपी  
 काष्टने प्रजाल छे ॥ ३ ॥

ध्रुव परिणति छनि जास, परिणति परिणमे  
 त्रिक राश ॥ करता पट प्रवृत्ति प्रकाश,  
 अस्ति नास्तिते काई सर्वनां भासरे ॥ जि० ॥४॥

अर्थ -त केवलज्ञानी अतीतकालना प्रथम  
 तीर्थकरने ध्रुव परिणति अस्तिपणे छे तेज परिणति  
 उत्पाद व्यय ध्रुव ए व्रण राशि पणे सर्वे समय  
 परिणमे छे एटले सर्व समय पूर्व पर्यायनो व्यय,  
 उत्तर पर्यायनो उत्पाद अने सकल मत्तानु ध्रुवपणु  
 सर्व द्रव्यमा होय जो सर्वे समय द्रव्यमाहे उत्पाद  
 व्यय ध्रुवता न मानीए ता द्रव्य पोताना कार्यनी  
 मिया करे नहीं तो शुन्यपण थाय कछु छे के-

“अथ क्रिया कारित्व द्रव्य तथा उत्पाद्  
 व्यय ध्रुव युक्त सत् लक्षण द्रव्यं” एतले द्रव्य  
 आप थापणु कार्य करवानी क्रिया एतले पर्याय  
 प्रवृत्ति न करे तो द्रव्यनु द्रव्यत्वपणु रहे नहीं अने  
 सर्व समय उत्पाद् व्यय न होय तो द्रव्यनु सत्  
 लक्षण पण रहे नहीं माटे उत्पाद् न्यय ध्रुवपणु सर्व  
 समय मानयु तैथी प्रभुजी पोताना शुद्धात्म पदनी  
 प्रवृत्तिना प्रकाश करवायाला छे रली सर्व द्रव्य  
 पोत पोताना द्रव्य क्षेत्र काल अने भावपणे सदा  
 अस्ति एतले छंता छे अने परद्रव्यना द्रव्यादिक  
 पणे कोई द्रव्य थाय नहीं, पर द्रव्यादिक रूपे न  
 थयु एवो स्वभाव पण पोतामा अस्तिपणे रक्षो छ  
 तेनज नास्ति स्वभाव कहीए एम अस्ति नास्ति  
 आदि वस्तुना अनत स्वभाव समकाल सर्व समय  
 तमारी ज्ञायकतामा भासे छे ॥४॥

सामान्य स्वभावनो बोध, केवल दर्शन  
 शोध ॥ सहकार अभावे रोध, समयता रे  
 कांई बोध प्रबोधरे ॥ जि० ॥ ५ ॥

अर्थ -सर्वे द्रव्या अस्तित्व वस्तुत्व आदि सामान्य स्वभावनु जाणवु तेने दर्शन गुण कहीण ते दर्शन गुण तमारे परम प्रगट शुद्ध थयो छे सामान्यपणे वस्तुनी छती जाणवामा इन्द्रियो तथा चंद्रसूर्यादिनी सहायजोईती नथी अने शरोधकेहतां ते दर्शन गुण रूपी अस्वी अनेत द्रव्य जाणवामा कोई टेकाणे रोकातो रूधातो नथी एटले अग्वलित वेवलदर्शन गुण प्रगट थयो छे एटले सामान्य विशेष बोध समयातरे थयो छे पण अग्वड समय वेवल-ज्ञान अने वेवलदर्शन उपयोग वर्त्त छे ॥ ५ ॥

कारक चक्र समग, ते ज्ञायक भाव विलग्न  
॥ परमभाव ससग, एक रातेरे काई थयो  
गुण वगरे ॥ जि० ॥ ६ ॥

अर्थ -जीवमा अनता गुणो छे, ते सर्वे समय अनत कार्य करे छे, ते दरेक कार्यना कारक चक्र भिन्न भिन्न छे, ते सर्वे कारक चक्र ज्ञान कारक चक्र सधवेवलगेला छे ज्ञानकारकचक्र कर तेम दर्शनादि सर्वे आत्म कार्यना कारकचक्र करे ते ज्ञान कार्यना कारक नीचे प्रमाणे जाणवा.—

- (१) उत्तम कारक-ते ज्ञान कार्यनो उत्तम पोते  
आत्मा.
- (२) कार्य कारक-स्वपर स्वरूप त्रिकाल भावनु  
जाणतु ते ज्ञान कार्य
- (३) करण कारक-ज्ञान कार्यनु उपादान कारण  
असरय प्रदेशो रहेला ज्ञानना  
अनता इति पर्याय. अने ज्ञान  
कार्यनु निमित्त ज्ञेय
- (४) संपदान कारक-इति पर्याय सामर्थ्यपणे  
प्रयत्नावी पोतेज पोताने  
अत बोधनु दान आपे ते  
स्वसपदा देवा रूप संपदान
- (५) अपादान कारक-तेज इति पर्याय साम  
र्थ्यपणे प्रयत्नावी अवाधनो  
नाश करवा त अपादान
- (६) अतिक्रमण कारक-स्वआत्मप्रदुर्गमकाल  
प्रवृत्ति ते अधिपति

अम अनत गुणोना अनत कारकचक्र शक्तिने  
समकाले प्रवर्त्ते छे तेथी अनत गुणोना चर्चा  
धर्मो पटलो परम भावने ससर्गे सर्वे गुणो प्रकृत



इम सालवन जिन ध्यान, भविसाधे तत्त्व  
विधान ॥ लहे पूर्णानंद अमान, तेह नी थायेरे  
काई शीव ईगानरे जि० ॥७॥

अर्थ — एम प्रभुना अवलवने जे भविशुद्धाम  
ध्यान राखी तत्त्वविधान साधेएटल प्रभुजाण अनत  
गुणोनां कारक चक्रो पोतानाज कार्यमा प्रवर्त्तावा  
प्रर्थ आत्मनिद्रि करी तम माहर पण आत्मसिद्धि  
रूप कार्य करवु अगर एजप्रमाणा आत्मनिद्रि करवा  
माटे प्रभुजीण कह्यु तो माहर सर्वगुणो निजात्म  
शुद्ध कार्यमा प्रवर्त्तावरा एज प्रभुनु आलवन जा  
णवु प्रभु आलवन विना अनादि अविद्या बडे पुद  
गल द्रव्य गुणपया यमा कार्यमाना ज्ञान गुण तमा  
प्रवर्त्ताये ते एटले पुदगल कार्यमा रोके ले, स्वाज  
अचराय ले, पण शुद्धात्म उपयोगमा प्रवर्त्ताव  
नधी, तेमज दर्शन गुणपण पुदगली ६  
धी शुभाशुभ अशुद्ध निश्चयमा  
चरणगुण पण पुदगलना अनत  
प्रवर्त्ताये ते कपायोमा शु  
धीर्षगुण पण पुदगलना

मलिन अने परतंत्र करे छे एम पोताना अनत  
 गुणो परसगे चलमलिन करी समार भ्रमण करतो  
 दुःख पामें छे पण त्यारे जीव प्रभ आलखनी थाय  
 त्यारे सकल कारक शुद्ध स्वभाव धर्ममा प्रवर्त्तावी  
 सकल दुःखधी निवर्त्ति परमानंद प्रगट करे छे एम  
 पूरो जेना भाप नहीं एहवा अत्यतीक आनंद प्रगट  
 थये छे एटले आत्म उपद्रय रहित परम निर्वाण  
 पदनो जरूर स्वामी थाय छे ॥७॥

दास विभाग अपाय-नासे प्रभु सुपसाय ॥  
 जे तन्मयताए घ्याय सही ते हनेरे देवचंद्र  
 पद थायरे जि० ॥८॥

अर्थ —हूँ प्रभुनों दास ते प्रभुना आलयने  
 नहीं बर्त्तो त्यासुधी परद्रव्यनी ममता आदि  
 विभाव धनेक प्रकार लु दुःख देछे ते प्रभु आलयने  
 सकल विभाव दुःख दोषनाश थाय माटे प्रभुनोज  
 पसाय जाण वो प्रभुने तन्म यस्ताए के, प्रभु जेम-  
 राग द्वेष आदि तजी शुद्ध स्वभावाचरणमा थिर  
 थया तेमजे भविरागादि विभाव छोड़ी सह जानंद  
 स्वभावमा थिर एह एटले तन्मय थह घ्याय ते

प्रत्यक्ष प्रभावक पुज्य गुरुमहाराज



दानजी बोधरा के पुत्र सुखलालजी की धर्मपत्नी बेरागन चचठवा तरफसे  
गाम गांगोलाव (नागौर)

## प्रस्तावना ।

जैन धर्म निवृत्ति प्रधान है । उसके उपदेष्टा तीर्थंकरों ने आत्मा और कर्म का स्वरूप बहुत विस्तार से वर्णन करते हुए प्रत्येक प्राणी सासारिक भोग विलासों से अलग होकर आत्मस्वरूप में अवस्थित होने से परमात्मस्वरूप बन सकता है, इसी पर जोर-दिया है । जैन धर्म में ईश्वर या परमात्मापद प्राप्ति का ठेका किसी एक ही व्यक्ति का नहीं मानते हुए प्रत्येक प्राणी को अपने पुरुषार्थ द्वारा मोक्ष प्राप्त कर सकने का विधान है । अतः जैन दार्ष्टिकोण से तीर्थंकरों का वदन, पूजन और भक्ति उन्हें सुश्रु करने के लिये नहीं पर स्वस्वरूप की प्राप्ति में वे निमित्त कारण हैं यही मान कर की जाती है । अपने दर्शन वदन व भक्ति से हमें अपने परमात्म-स्वरूप का ज्ञान व भान होता है और उनके बतलाये हुए मार्ग पर चलने से आत्मा परमात्मा बन सकती है । इसीलिये उनके गुणानुवाद रूप हजारों स्तुति स्तवन जैन कवियों ने बनाये हैं जिनमें से भक्ति के साथ गभीर तत्त्व त्रिचरणामय चौईस तीर्थंकरों के स्तवनों में श्रीमद् आनन्दधनजी की चौबीसी के बाद श्रीमद् देवचन्द्रजी रचित चौबीसी, बीसी एव अतीत चौबीसी का उल्लेखनीय स्थान है ।

श्रीमद् देवचन्द्रजी निरतर-गच्छ के विद्वान् थे । आपका जन्म बीकानेर के निकटवर्ती ग्राम में स० १७४६ में हुआ था । स० १७५६ में आपने दीक्षा ग्रहण की । प्रारम्भ से ही आपका भ्रूणव्यवस्था-आध्यात्मिक ज्ञान की ओर अधिक रहा फलतः २० वर्ष की यौवनावस्था में आपने वैराग्य और आध्यात्मिक रस से सराबोर 'ध्यानदीपिका चौपाई' नामक ग्रन्थ की रचना की । स० १७६६ से स० १८१२ तक, जहाँ तक आप जीवित रहे—निरतर जैन तत्त्वज्ञान और आध्यात्मिक विषयों पर ग्रन्थ रचना करते रहे । इन सब का समग्र श्रीमद् बुद्धिसागर सूरिजी ने करवा कर आध्यात्म ज्ञान

जखर मकल देवो भा चद्रमा समान शुद्ध सिद्ध ।  
पामे ॥८॥ सपूर्णा.

॥ अथ द्वितीय श्री निर्वाणी प्रभुनु स्तवन  
वीरजी प्याराहो वीरजी प्यारा ॥ ए राग ॥

प्रणमुं चरण परमगुरु जिनना, हंस ते मुं  
जन मनना ॥ वासी अनुभव नंदन वनन  
भोगी आनंद घनना ॥१॥ मोरा स्वामी हं  
तोरो ध्यान धरीजे, ध्यान धरीजे हो सिं  
वरीजे, अनुभव अमृत पीजे । मोरा स्वा  
हो तोरो० ॥ ए आकणी ॥

अर्थ - घनघाती रूप कर्म गतुने जीत्या व  
केवलज्ञानादि चार अनता जेणे प्रगट कर्या एह  
निर्वाणी प्रभु अतित घोषीशीना घोजा तीर्थक  
परमगुरुना चरगाकमलने अगर शुद्ध स्वभावाच  
एने महु सन्माने प्रणमु ह्यु जेने मुनिजनो पोतन  
मनरुप मानसरोवरमा हस रुपे रमावे छे ह्य  
जेम दूधपी पाणी भिन्न करी दूध पीए छे तेम प्र

अनात्म भावनां लक्षण भिन्न जाणी दर्शावी मुनि-  
 श्रोने पण अनात्म लक्षणोनी आदर तजावी शुद्धा-  
 त्म लक्षणमय शुद्धात्म ल. द्यनो अनुभव करावे  
 छे, वली प्रभु आत्मानो अनत शुद्ध शक्तिरुप नद-  
 नघनमा वसे छे, अनत गुणोनी सुवासनामा मग्न  
 तृप्त धई रह्या छे, एम अनत स्वगुण आनद सम-  
 काले भोगवे छे तेथी आनदघन भोगी एहवा  
 माहरा नाथ विभाविक दुःखथी छोडावनार अने  
 परम निवृत्ति स्थानक आनदपुरीमां ( शिव नगरीमां )  
 निरवाण पद ( निश्चल पद ) ना दातार तमारुज  
 ध्यान धरीए. जगवासी जीव पुद्गल ध्याने, अ  
 शुद्ध अभवसाये, अशुद्ध लेख्याए, अशुद्ध चेष्टाए  
 विभावमा प्रीति करवे ज्ञानाचरणादि कर्म पाथी  
 दीन दुःखी परतत्र धई रह्या छे ते देखी हुं भव  
 भयथी उद्विग्न थयो प्रभुनुज ध्यान करु एदले प्रभुनी  
 आणा समय मात्र पण चूकु नहीं ए जिज्ञासां छे  
 तमारुज ध्यान धरीए तो सिद्धि घरीए माटे शुद्धा-  
 त्म गुणमा उपयोग थिर राखवा अने थिरता बधा-  
 रवा रुप अनुभव अमृत पीए ॥ १ ॥

सकल प्रदेश समा गुण धारी, निज निज  
कारज कारी ॥ निराकार अवगाह उदारी,  
शक्ति सर्व विस्तारी ॥ मोरा० ॥ २॥

अर्थ.-प्रभुजीने असख्यात प्रज्ञे ज्ञानादि अनंत  
स्वगुणो सरखा छे कोईप्रदेशे कोई गुण पण अशमात्र  
ओझा अधिको नथी जेम सोनान सर्व प्रदेशे भारे  
पीलाश चाकाशादि सर्व गुणो सरखा छे तेम शुद्ध  
द्रव्यने सर्व प्रदेशे गुणो सरखा होय छे ते दरेक  
गुणो आप आपणु कार्य सर्व समय निरंतर करे छे  
कोई गुणनी प्रवृत्ति कोई समय पण रोकाती नथी  
तेम अन्यद्रव्य कोई द्रव्यना गुणपर्याय प्रवाहने  
अटकावी रोकी शक्तो नथी जेम वर्ण गुण गंध  
आदि गुणनु कार्य करतो नथी पण वर्ण गुण वर्ण  
पर्यायप्रवृत्तिरूपज कार्यकरे छे तेमज्ञान गुण दर्शन  
गुण आदि अन्य गुणनु कार्य करतो नथी अर्थात्  
सर्वे गुणो सर्व समय आप आपणु कार्य कर छे  
पण स्वजाति अन्य गुण के विजाती अन्य गुणनु  
कार्य कोई गुण कोई समय पण करतो नथी एम  
कैरिणामीकता घर्म जाणवो प्रभुनु अग निराकार

जायक रूप छे पुद्गलो पेटे वर्णादि वीश गुण रूपे  
 अथवा ते माहेला कोड रूपे पण नथी तेथी कल्याण  
 कारी निराकार अवगाहना छे अवगाहना तो  
 आकाश प्रवेशने रोके तने क्लीण प्रभुनी अवगाहना  
 व्यवहारथी आकाश प्रदेशमा ऋहेवाय पण निश्च  
 यथा तो प्रभु स्वक्षेत्री छ परक्षेत्री नथी जे प्रदेशमा  
 सिद्धनी अवगाहना छे तेज प्रदेशमा अजीव पुद्-  
 गल त्रधा तथा निगोद राशी शरीर विगेरे अनेक  
 द्रव्या छे पण निद्धनी अवगाहनाथी ते क्षेत्र रोकातु  
 नथी पण व्यवहार नयथी व्यवहार द्रष्टिने सम  
 जवा बदले अवगाहना कही पण परमनये जीव  
 अनअवगाही छे, " उक्तञ्च अचागमे पाचमा अध्य  
 यने उद्देशे द्रष्टे कथ्यु छेः— से न दीहे, न हस्ते, न  
 वदते, न तसे, न चउरसे, न परिमटले, न किणहे न  
 नीले, न लाटिण, न हालिहे, न सुक्विले, न सुरभि  
 गधे, न दुरभि गधे, न तित्ते, न कटुवे, न कषाये,  
 न आचिले न महुरे, न करकडे, न मउण, न गुरुण,  
 न लहण, न मीण, न उणहे, न निण्हे, न लुकसे, न  
 काऊ, न रुहे, न सग न ईथिथ, न पुरिसे, न अन्न-  
 हा परिने, सन्नेउवमा निविभज्ञये, अरुवि सत्ता



अपयस्स पय नत्थि” एम छे तो साकार जवमा-  
हना केम कहेवाय ? आत्मामा अनत गुणानी  
अनत शक्ति छे ते सर्व शक्ति ससारीक जीवोनी  
परभाव अनुयाधीपणो रोकाइ छे पण प्रभुज,ए तो  
सकल परभावनो नाश करी गुण गुणना अनतानत  
पर्यायी शक्ति प्रगट करी स्वतत्रपणे विस्तारी  
ते ॥ २ ॥

गुण गुण प्रति पर्याय अनंता, ते अभि-  
लाप्य स्वतता ॥ अनत गुणानभिलापी सता,  
कार्य व्यपार करता ॥ मोरा० ॥ ३

अर्थ - प्रभुजीने अनता गुणो छे ते गुणगुण प्रते  
अनत पर्याय पोताने स्वतत्र छे तेमाथी अनता  
पर्यायो अथवा धर्मो वचन अलापमा आवी शके  
एवा छे तेने अभिलाप्य धर्म करिए अने तेथी  
अनतगुणा वचन अलापमा न आवी शके एहवा  
अणभिलाप्य धर्म छे ते अभिलाप्य अने अणभि-  
लाप्य सर्व धर्मा आप आपणु कार्य दर समय करे  
छे, -यापार ३० ते सर्वे पर्यायो कार्य करवामा  
प्रवर्तते छे एज प्रमाथी पचास्तिकायमा अभिलाप्य

धर्म अनंता अने तेथी अणभिलाप्य धर्म अनंतगुणा  
जाणवा ॥ ३ ॥

छति अविभागी पर्यय व्यक्ते, कारज शक्ति  
प्रवर्त्ते ॥ ते विशेष सामर्थ्य प्रशक्ते, गुण परि-  
णाम अभिव्यक्ते ॥ मोरा० ॥ ४

अर्थ:-द्रव्यना प्रत्येक प्रदेशे छति पर्याय अनंता  
हे ते एक एक पर्याय अविभागी हे एटले ते पर्या-  
यनो कोई प्रकारे विभाग धई शके नहि ते पर्यायो  
कार्य सन्मुख प्रवर्त्तवाथी सामर्थ्यपणे थाय तेथी  
कार्य करवानी शक्ति प्रवर्त्ता ते विशेष स्वभाव  
वहिए ते विशेष गुणोनु सामर्थ्यपणु भिन्न भिन्न  
शक्तिवालु हे पण जे जे गुणनो जे जे परिणाम ते-  
ते गुण सन्मुख प्रवर्त्ती प्रगट थाय ॥ ४ ॥

निरवाणी प्रभु शुद्ध स्वभावी, अस्य निरा-  
यु अपावी ॥ स्वाहादी यम नीगन रात्री, पुरण  
शक्ति प्रभावी ॥ मोरा० ॥ ५ ॥

अर्थ:-निश्चल पदने पाख्या एषा निरवाणी  
प्रभुना विशेष स्वभाव पूर्ण शुद्ध धया हे निरवाणी

निर्भय छे ससारी जीयो चार गतिमा आउग्यानी  
 स्थिति सुधी रहे छे अने मरणाते अन्य स्थानके  
 जाय छे पण प्रभुने तो सिद्ध क्षेत्र छोडी अन्य स्था  
 नके जयुं पढतु नथी तेथी आयुष्मने नाबे नथी पण  
 सादि अनत स्थिती छे सकल पाप दोष रहित  
 परम पवित्र छे निश्चय स्यादाद मत्ताना भोगी छे  
 पोतानी अनत पर्यायप्रवृत्ति चानामा राज्य करता  
 राजी छे सर्व शक्ति निरावरण भई तेथी पूर्ण  
 शक्ति प्रभावयत छे ॥ ५ ॥

अचल अखण्ड स्वगुण अरामी, अनता-  
 नंद विसरामी ॥ सकल जीव खेदज्ञ सुस्वामी,  
 निरामगधी आकामी ॥ मोरा० ॥ ६ ॥

अर्थ.-प्रभुना अनत गुणो चलापल रहित  
 धया, भाव धीर्य पूर्ण गुणोमा अचल अक्षय प्रवर्त्यु  
 तेथी कोइ गुण के कोइ पर्याय राढाय घसाच नहीं,  
 सब गुणाना पर्यायनो अखण्ड प्रवाह वहे तेथी गुणो  
 के पर्यायो व्यय पामे नहीं णटले सर्व समय गुणो  
 अने पर्यायो कायम रहे पण विणजे रूटे नहीं मात्र  
 आधोर्भाव तिरोनाय धया कर पूर्ण पर्यायनो व्यय

अने उत्तर पर्यायनो उत्पादु सर्वे समय थया करे  
 पण ते पर्यायो सर्वे समय छति रूप कायम होय  
 माटे दृष्टा ध्रुव गवेण्या छे एवा निमल गुणोमा  
 प्रभु एकातिक अत्यतिक आनंद भोगवे छे एम  
 अनत आनंदमा विश्राम लीधो छे प्रभु सर्वे संसा-  
 री जीवोना गेटज छो एटले सर्वे जीवो सत्ताए  
 सिद्ध समान छे तोपण अनादि अधिद्याए पोतानी  
 आत्मगुदना अणजाणता देहादि अधिर अने पर-  
 तत्र पुढगल पर्यायनी ममताए जन्म जरा मरण  
 राग शोक कषाय अज्ञान मिथ्यात्वादिके क्लेशित  
 परतत्रता वजे क्षण मात्र पण विराम पामता नथी  
 एवा सदयुक्त जीवोने देखी प्रभु तेमनो खेद टालवा  
 माटे शुद्ध नये शुद्ध स्वरूप दर्शावी आठे कमेजन्य  
 दृग्गधी मुक्तावा अर्थे भज्योने मांक्षमार्गमा प्रेर  
 मेरावे छे तेधी खेदज्ञ छे, निश्चय नयथी प्रभु कोई  
 अन्य द्रव्यना स्वामी नथी पण सुस्वामी एटले पो  
 ताना जानादि अनतगुण पर्यायना स्वामी छे ह्यव-  
 हार नयथी पोतानी आशा पालक सेवकोने वार  
 गति भ्रमणथी छोडावे अने ज्ञानदर्शन अरण अम-  
 तधीर्य अयायाघादि स्वतत्र सुख आपे माटे

सुखामो के० रुडा स्वामी के अशुची पुदुगलनी  
 गच रहिल अने कोई पण अन्य वस्तुना कामी नथी  
 कामना तो अधुराने होय अने परमेश्वर तो परम  
 गुणी पूर्णनदीने कोई प्रकारनी कामना रहि नथी ॥६॥

नि.सगी सेवनथी प्रगटे, पूर्णानंदी ईहा ॥  
 साधन शक्ते गुण एकरवे, सीधे साध्य स  
 मीहा ॥ मो.ग० ॥ ७ ॥

अर्थ - एइवा नि.सगी के० सरुल परद्रव्य सग  
 रहिन सहज स्वभायानदी प्रभुनी द्रव्य भाव सेवा  
 करनारने पूर्णानंद करवावाली शुद्ध तत्त्वरुची प्रगट  
 थाय ते तत्त्वरुची उपनेधी आत्मलब्धि वीर्य प्रगट  
 थई पूर्णानंद प्रगट थाय. साधन शक्तिवडे परिश्रति  
 गुणथी अभेद करे एटले परपरिश्रति त्यागी साध्य  
 सिद्ध करवाना जे इच्छा हनी ते पूण साध्य सिद्ध  
 करे एटले सिद्धता पामे ॥ ७ ॥

पुष्ट निमित्तालंबन ध्याने, सालवन लय  
 ठाने ॥ देवचंद्र गुणने एक ताने, पहोचे पू  
 रण थाने ॥ मो.ग० ॥ ८ ॥

अर्थः- प्रभुजी तमे मोक्षाभिलाषीने पुष्ट आल-  
 वन छो एटले जेम प्रभुए ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि  
 आत्मगुणो पुढगलीक कार्यमाधी पाछा वाली सह-  
 ज.त्म कार्यमा जोख्या अने भव्य जीवोने सर्वे शक्ति  
 सहजात्मकार्यमा प्रयुजवी दर्शावीए वझे प्रकारे प्र  
 मुनु आलवन लेई जे घसें ते भाखर निराखवता  
 पामे, एटले ते जीवने कोई समय पण पुढगलीक  
 आलवन लेउ पडे नहीं, पर आलवन लय थाथ  
 चारनिकायना देवोमां चद्रमा समान निर्वाणी प्रभु-  
 ना व्यक्त ज्ञानादि शुद्ध गुणोमां एकतापरणे उपयोग  
 अखड रुरे एटले शुद्ध गुणोना गुण बहु माने पूर्ण-  
 नद स्थानके पहोवे ॥ ८ ॥ सपूर्ण ॥

॥ अथ श्री तृतीय सागर प्रभु जिन स्तवन ॥  
 ॥ चउमासी पारणु थावे ॥ ए राग ॥

गुण आगर सागर स्वामी, मुनि भाव  
 जिवन नि कामी ॥ गुण करणे कर्तृ प्रयोगी,

प्राग्भावी सत्ता भोगी ॥ १ ॥ सुहृकर भव्य  
 ए जिन गात्रो, जिम पूरण पदवी पावो ॥  
 ॥ सुहंकर० ॥ ए आकणी ॥

१५ - श्री सागर स्वामी ज्ञान दर्शन वीर्यादि  
 अनत उत्तम गुणोना आगर के० निधान वे, मुनि  
 नु मुनिपणु कायम राखवा मुनिश्रोना भाव जीवन  
 छे अने मुनि लोकोने शुद्धात्म तस्वमा विशेषे वि-  
 श्राम आपवाताता छे वली सागर स्वामी सकल  
 परद्वयनो कामना रतित ते, ज्ञान दर्शनादि स्वभा  
 विक्र अनत कार्य सकल समय सहज स्वभावे कर  
 छे अने ते कार्यगुण प्रगटपणे थयो ते ज्ञान दर्शन  
 चरण वीर्यादि अनत कार्यगुण समुदायना समकाले  
 अनत आनद भोगी हो आत्माना प्रति प्रदशमा  
 निज कार्य करवाना प्रति पर्यायो अनता, देखवा  
 रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनता, आचरण  
 रमण रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनता, वीर्य,  
 अचल राखवा रूप कार्य करवाना छती पर्यायो  
 अनता तेम ए आदि अनत कार्य करवाना अनत  
 गणना छती पर्यायो प्रति प्रदेशे अनतानता छे ते

छती पर्याय रूप गुण करण प्रयोग विना प्रयासे दर  
समय अनंत स्वस्वकार्य थर्या करे छे ते कार्यनी व्य-  
क्ति अने शक्तिना पण भोगी छो हे भवि जीवो !  
एवा सुख करचावाला परम समाधिना दातार जि-  
नेश्वरने स्वधो-तेमना गुण गावो जेथी पोतानी सह-  
ज पूर्ण परमानंद पदवी पामो ॥ १ ॥

सामान्य स्वभाव स्वपरना, द्रव्यादि चतु-  
ष्टय धरना ॥ देखे दरशन रचनाये, निज वी-  
र्य अनंत सहाये ॥ सु० ॥ २ ॥

अर्थ:- अस्तित्वादि स्वपर द्रव्यना सामान्य  
स्वभावने अने द्रव्य क्षेत्र काल भाव एहवा निजा-  
त्म स्वभावने निज अनंत वीर्य सहाय वडे दर्शन  
गुणो करी सकल समय पूरण पदे देखो छो ॥ २ ॥  
तेहने ते जाणे नाण, ए धर्म विशेष पहान ॥  
सावय वीकारज शक्ते, अविभागी पर्यय  
व्यक्ते ॥ सु० ॥ ३ ॥

अर्थ:- एमज स्वपर सामान्य विशेष स्वभावने  
अने स्वपर द्रव्यादिकने विशेष प्रधान ज्ञान गुणो



ફરીને પૂર્ણ પર્યાયે સકલ સમય જાણો છો ઇટલે  
 નિર્મલ કલ્પજ્ઞાન રૂપ છો પ્રતિ પ્રદેશે સર્વે કાર્ય  
 કરવાના કલ્પવણે છતી પર્યાયો અનતાનત રહ્યા  
 છે તે સાધયવ કે૦ એક સમય પ્રવર્ત્તિમા આવીર્ભાવે  
 ઉપજે અને તીરોભાવે વિણસે વલી ધીજા સમયે  
 આવીર્ભાવે ધણા પર્યાયો આવીર્ભાવથી વિણસી  
 તીરોભાવે જાય (ઉપજે) એમ દર સમયે જૂદા જૂદા  
 કાર્ય કરવાને માટે તેજ પર્યાયો આવીર્ભાવે તિરો-  
 ભાવે ઉપજ્યા વિગત્યા કર તેથી તે પર્યાયોને માય-  
 યવ પણ કહીયે અને સમય સમય જૂદા કાર્ય કરે  
 તેને ધીકારજ શક્તિ કહીયે પણ તે સર્વે છતી પર્યા-  
 યો અધિભાગી છે અને કાર્ય પ્રયોજને ઇટલે ઉદ્ધતાય  
 સામર્થ્યવણે આવે પણ તે સર્વે છતી પ્રજાણો સત્તા  
 વણે સદા ધ્રુવ છે નવે નવે સમયે જ્ઞેયોની નવી નવી  
 વર્ત્તના ધાય તે અનતાનતી વર્ત્તનાને જાણે માટે  
 જૂદા જૂદા કાર્યને જાણે તે ધીકારજ શક્તિ કહીયે  
 ધીજી રીતે સાધયવ કે૦ અધિભાગી ભિન્ન ભિન્ન  
 પર્યાય માટે આત્મ અગના અધયવો પણ કહીયે ॥૩॥

जे कारण कारज भावे, वरते पर्याय प्र-  
भावे ॥ प्रति समये व्यय उत्पादि, ज्ञेयादिक  
अनुगत सादि ॥ सु० ॥ ४ ॥

अर्थः-छती पर्यायो प्रवर्तते तेने कारण कृष्टिए  
अने कारण होय त अवश्य कार्य करे अने पर्याय  
पोताना प्रभावे वर्तते तेथी प्रति समय व्यय उत्पाद्  
पटले कारणपणेथी कार्यपणे उपजे अने कार्य करी  
पाछा कारण पणे उपजे तेथी दर समय व्यय उत्पा-  
द थया करे अने नत्रा नचा ज्ञेयने जाण्वायी तेनी  
सादि पण कहीए उक्तच -“परिगमनं एज्जाओ”  
पटले पर्याय एक कार्य कडे रीते करी तीजा का-  
र्यमा जाय, एक कार्यपणे उपजेला त्याथी विणसी  
तीजा कार्यपणे उपजे तेमज दर समय पर्याय प्र-  
वाह जाणवो ॥ ४ ॥

अविभागी पर्याय जेह, समवायी कार्यना  
गेह ॥ जे नित्य त्रिकाली अनत, तसु ज्ञायक  
ज्ञान (भाव) महत ॥ सु० ॥ ५ ॥

અર્થ -પ્રતિ પ્રદેશે અવિભાગી જે છતી પર્યાય રહ્યા છે તે આત્માથી અભેદપણે સમવાય સવધે છે અનાદિ સવધે પણ કહિણ અને તે પર્યાયોને સર્વે સમય કાર્ય સમવાય ણટલે કાર્ય સવધ છે ણટલે તે કાર્યના ઘર કે ને અવિભાગી પર્યાયો નિન્ય છે, ત્રિકાલી છે, અલ્પ છે, તેમાથી એક પર્યાય પણ કોઈ કાલે ઘટે થયે નહી તેથી અક્ષય છે, સ્વતંત્ર છે અપ્રયાસે કાર્યકારી છે ણટલે વિના પ્રયાસે પણ સહજ સ્વભાવિક કાર્ય થયા કરે તેમાના જ્ઞાનના અનત પર્યાયોમા પરમ જ્ઞાપક ભાવ રહ્યો છે તે પર્યાયો ઘડે પોતે પોતાને અને અન્ય દ્રવ્યના ગુણ પર્યાયોને જાણવાની મહત શક્તિ રહી છે તે શક્તિ પ્રભુ જીને તો વ્યક્તિ પણે થઈ તેથી તે જ્ઞાનાદિક અનત ગુણોના જ્ઞાતા ભોક્તા છે ॥ ૫ ॥

જે નિત્ય અનિત્ય સ્વભાવ, તે દેસે દર્શન ભાવ ॥ સામાન્ય વિશેષનો પિંડ, દ્રવ્યાર્થિક વસ્તુ પ્રચલ ॥ મુ० ॥ ૬ ॥

અર્થ -વસ્તુતા જે નિત્યાનિત્ય સ્વભાવ તેને પ્રભુજી દર્શનભાવે કરી દેસે છે તેથી પ્રભુ સામાન્ય

अने विशेष लक्षणना एकत्व पिंडआत्म द्रव्य छे ते द्रव्यपणे सदा ह्यतीवत छे अने प्रचंड के० महा-वीर्यवत (बलवत) वस्तु छे ॥ ६ ॥

ईम केवल दर्शन नाण, सामान्यविशेषनो भाण ॥ द्विगुण आत्म श्रद्धाण, चरणादिक तसु व्यवसाए ॥ सु० ॥ ७ ॥

अर्थ:- एम प्रभुजी केवलदर्शन अने केवलज्ञान-वत छो एटले वस्तुना सामान्य विशेष भाव प्रकाश करवावाला सूर्य छो उपयोगमयी आत्मा छे अने ते उपयोग सामान्य विशेष वे प्रकारे छे उक्तंच “उपयोगमयो अस्मा, उपयोगो इतिअस्मो” एटले आत्मा दर्शन ज्ञानमयी छे अने चरणादिक तसु व्यवसाए के० ज्ञान उपयोग अने दर्शन उपयोगमा धिरताए रमण तेनुज नाम चारित्र कहीए वली ज्ञान दर्शनना अनंत पर्यायमा धिरताए उपयोग रमे तिहां रागादि विभावनां अघटाण नधी माटे परम चीतरागताए शुद्धात्मभावमा धिरता तेनेज चारित्र कहीए अने आदि शब्दे उपयोगमा आत्म अग अने आत्म गुणपर्याय अवाहितपणे रहे तेने

अज्ञानाघ गुण कहीए, उपयोगने धिर अडोल  
अकप रागवाचाली निज शक्तिने अचल अनत  
धीर्य कहिए, शुद्ध उपयोगमा धिर रहेलो आत्मा  
परम समाधि भोगवे छे माटे तेन परम समाधि  
कहिए, कोई प्रकारनो भय आवे नहीं माटे निर्भय  
कहिए उली कोई प्रकारे आकुलता आवे नहीं माटे  
निराकुल कहिए, उपयोगमा अन्य प्रवृत्ति नहीं  
माटे परम निवृत्ति कहीए, शुद्धापयोगवतन परतत्र  
ता नहीं माटे परम स्वतंत्रता कहीए, शुद्धोपयोगी  
आत्म गुणमाटे परम तृप्तिवत छे माटे परम तप  
कहीए, धिर उपयोगवत स्वपरद्रव्य भाव प्राणना  
हाणी करतो नहीं तेथी परम क्षमा कहीए वस्ती  
सर्व जीवोनी सत्ता समान जाणे छे कोइने हीए  
अधिक जाणतो नहीं माटे परममार्दव कहीए, अहीं  
आं स्वपर जीवने वचनु ठगनु नहीं धरुता नहीं  
माटे परम धार्यव कहीए, अहींआ परद्रव्यनी का  
मना इच्छा मूर्छा ग्राहकता व्यापकता रक्षकता  
स्पृहा नहीं माटे परम मुक्ति कहिए एम सहज शु  
द्धात्म अनत गुणो उपयोगमांज भास छे ए प्रमा  
णे व्यवसाय के० ज्ञानदर्शन शुद्धोपयोग व्यापारमा

ચરણાદિક અનંત ગુણો આઠવા જાણવા ॥ ૭ ॥

દ્રવ્ય જેહ વિશેષ પરિણામી, તે કહીએ  
પજ્જવ નામી ॥ છતી સામર્થ્ય દુભેદે, પર્યાય  
વિશેષ નિવેદે ॥ સુ૦ ॥ ૮ ॥

અર્થ:-દ્રવ્ય પોતે સામાન્ય છતા વિશેષ પરિણા-  
મી છે એટલે એક દ્રવ્યમા અનંત સ્વપર્યાય અને અન-  
ત સ્વપર્યાયમા એક દ્રવ્યપણું માટે પર્યાયનામી કહી  
એ ઉક્તચ.-" ॥ ગુણાણામાસઝ દ્વં, એક દ્વંસિ-  
યા ગુણા ॥ લરણ પજ્જવાણતુ, લભઝ નિસ્સિ-  
દિયા ભવે " ॥ એટલે અનંત પર્યાય લક્ષણવત દ્રવ્ય  
જાણ્યો તે પર્યાયો છતી અને સામર્થ્ય એમ છે ભેદે  
છે, છતી પર્યાય ક્ષેત્ર વિસ્તારપણે સર્વ પ્રદેશમા અન-  
તાનતા રહ્યા છે અને તે વકાલે સામર્થ્ય પણે ઉર્દ્ધ-  
તાણ આવી કાર્ય કરે છે એટલે તિર્યક્ ક્ષેત્ર વિસ્તાર-  
પણે જે રહ્યા તે છતી પર્યાય કહીએ અને સ્વકાલે  
ઉર્દ્ધતાએ આવી આપ આપણું કાર્ય કરે તે સામર્થ્ય  
પર્યાય કહીએ એમ વિશેષ પર્યાયને તિવેદે છે. વિ-  
શેષ ભોગવે છે ॥ ૮ ॥

तसु रमणे भोगनो वृद्ध, अप्रयासी पूर्णा-  
नद ॥ प्रगटी जस शक्ति अनंती, निज कार-  
ज वृत्ति स्वतंती ॥ सु० ॥ ६ ॥

अर्थ.-ते अनत स्वशुद्ध रम्य पर्यायमा रमण  
तेधी दरेक समय समकाले अनतानदनो भोग छे  
अने ते पर्याय प्रयुजगामा अने भोग भोगववामां  
फोई प्रकारे कोई वरत पण प्रयास करवो पढतो  
नधी पण सहेजे पर्याय प्रवर्त्ते छे अने सहेजे भोग  
थानद उपजे छे एधी जेने अनती शक्ति स्वतत्र  
प्रगट धई छे तेधी सकल गुणोनी आप आपणा  
कार्योनी प्रवर्त्ता सहज स्वभावे स्वतत्रपणे थाय  
छे ॥ ६ ॥

गुण द्रव्य सामान्य स्वभावी, तीर्थपती  
त्यक्त विभावी ॥ प्रभु आणा भक्ते लीन,  
तिणे देवचंद्र पद कीन ॥ सु० ॥ १० ॥

अर्थ-प्रभु, गुणे अने द्रव्ये सामान्य स्वभावी  
ते, चतुर्विधि सघने तारवानो मार्ग स्थापन करवा-  
वाला तेधी तीर्थपती जेणे भक्त विभाव तज्यो

छे एम छता पण उदय प्रभावे भवि जीवोने देशना  
 आपी तारे छे पण तेनु भमत्व ररता नथी जे जीव  
 प्रभुजीनी आणा सेवबामा लयलीन थयो तेणे देव-  
 मां चद्रमा समान एवु पोतानु सिद्धि पद प्रगट  
 कर्युं करे छे अने करशे । १० ॥

॥ अथ चतुर्थ श्री महाजस जिन स्तवन ॥

आत्म प्रदेश रंगधल अनुपम, सम्यक्-  
 दर्शन रंगरे, निज सुखके सधैया ॥ तुं तो  
 निज गुण खेल वसंतरे ॥ निज० ॥ पर परि-  
 णति चिता तजी निजमें, ज्ञान सखाके  
 संगरे ॥ नि० ॥ १ ॥

अर्थ:-आत्माना असरयाता प्रदेशमा रहेली  
 ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि अनंत आत्म शक्ति ते  
 अनंत आनंद आपयावाली छे माटे रग स्थानरु  
 तेनेज करीण के ज्यां अनंत आनंद आवे अने जे  
 विषयनो आनंद ते तो अधिर परतत्र बहु रोगो



अने कर्मबधनु कारण छे तेमा विपरोग वशे अज्ञा-  
 नीने भोगबुद्धिए आनद मालूम पड़े छे पण आत्म  
 सत्ताभूमिमा रहैलो आत्मीक आनद तेने एहवा  
 उपचरित आनदनी उपमा लागी शके नहीं गयो  
 अनुपम निरुपचरित परम आणद छे पण ज्यारे  
 जीव मिध्यात्व बुद्धिए थयेती विपर्याप्त वासना  
 तजे अने सम्यक्दर्शन प्रगट आय तोज ते आणद  
 लई शके तो सम्यक्दर्शन करी रग आउ माटे  
 सम्यक्दर्शन सल्लि आत्म मिद्धि सुगता टानार  
 श्री महाजस जिनेश्वर महाजसवतने आत्म मिद्धि  
 सुखना साधक मन्यजीवो सेवा-ध्यावा हं शाव  
 तसुख अभिलाषी । जेमा अनत पर्यायना वास छ  
 एहवा आत्मगुण रुप वसतमा निरतर गेलो पुद  
 गल परिणतिधी काई काले पण सुख होष नहीं  
 केमके ते अनत वर्णार्थी निपजेली माटे विनार्था  
 क अने आपणी इच्छाए रहे नहीं, आपणी इच्छाए  
 रस नहीं एम छता पण भूढ जीव ए माटे अमथी  
 सुख मानी उलटो प्रयास करी फोकर अम खेद  
 भोगवे छे एमा उमेद करवाधी नाउमेदपणु थाय,  
 ए माटे सुखनी आशा राखवाधी निराशपणु आवे

माटे पर परिणतिनी आशा तजी शुद्ध दर्शन ज्ञान  
 चरणमय निजात्म परिणतिमा खेलो परपरिणतिनुं  
 चितवन ते क्लेश मात्र छे माटे ते तजी ज्ञानमित्र  
 साथे अखंड स्वतंत्र शुद्धात्म परिणतिमा खेलो ते  
 धीज एकांतीक अत्यतीक आनंद उपजे. अहिंसा  
 काई क्लेश के परतत्रता छे नहीं ॥ १ ॥

वास धराम सुरुचि केशर घन, बाटो  
 परम प्रमोद रे ॥ नि० आतम रमण गुलाल  
 की लाली, साधक शक्ति विनोदरे ॥ निज ॥ २ ॥

अर्थ - शुद्धात्मम परिणतिमा उपयोगनो वास  
 करघो ते रूप धरामनी शीतल ल्यो अने शुद्धात्म  
 गुण समुदायमा रूढ़ी परम रूचि रूप जयाबध  
 केशर परमानंदे निज अगे बाटो अने रम्य आत्म  
 गुणमां रमण रीक्त रक्त परिणाम रूप गुणावनी  
 लाली आत्म अगे चढे तेथी साधक जीवने आपणी  
 अनंत स्वतंत्र शक्तिना विशेष प्रसाद रूप  
 उपजे ॥ २ ॥

ध्यान सुधारस पान भगनता, भोक्त

महज स्वभोगरे ॥ निज० ॥ रिल एकत्वता  
तान में वाजे, वाजित्र सनमुख योगरे ॥  
निज० ॥ ३ ॥

अर्थ - शैलिक कार्यपट्टिथी मन वचन कायाना  
जोगने निवारी निवृत्ति लेई उपयोगने एक शुद्धात्म  
ध्येयमा लायवो, थिर अडाल अकैप करवो तेनु  
नाम ध्यान रुद्रिये ते ध्यान रूप असृत पानथी  
मग्न अथु ते परम मग्नता जाणवी अने आत्म  
गुणाना सहज सुभाग रूप भोजन जाणु परमा-  
नद स्वगुण परिणतमां रील तथा आत्म गुणना  
अनन् पर्यायना एकता रूप अण्ड धाराण तान  
लाग्यु ते तान रुद्रिये अने मन वचन काय योगी  
प्रवर्ती अन्य कार्यशी तूटी सजम कार्य सन्मुख  
लागी ते पाग मन्मुख रूप वाजित्र रुद्रिये ॥ ३ ॥

शुभलध्यान होरीकी ज्वाला, जाले कर्म  
कठोररे ॥ निज० शेष प्रकृति दल खिरण  
निर्जरा, भस्म खेल अति जोररे ॥ निज० ॥ ४ ॥

अर्थ - सकलद्रव्यना द्रव्य गुण पर्याय लक्षण

भिन्न भिन्न विचारी जे जेना ते तेनामा समाची पर  
 लक्षणथी परम उदासीन धरुं ते पृथक्त्वचितर्क  
 स्वपर विश्वार नामा शुक्लध्याननो पहेलो पायो  
 अने आपणा अनत पर्यायो गुणोमा अने द्रव्यमा  
 संक्रमाची अभेद निधिवल्प उज्वल समधानतर  
 अखंड ध्यानरूप शुक्लध्यानना एकत्वचितर्क अपर  
 विचार नामा धीजा पायानी ज्वाळत्य ज्योति रूप  
 होलीनी ज्वाळामा फर्मरूप कठोर काष्ठ घाली भस्म  
 करी खार उडाची चौदमा गुणठाणाना कृते शेष  
 चार तेर प्रकृति दल खेरवचा रूप निर्भरा ते व्युद्धिन्न-  
 क्रिया निवृत्तिरूप भस्मखेल अति जोरे करी सकल  
 कर्म पापमल धोई शुद्ध ब्रह्मरूप परमसिद्धि पामे ॥ ४

देव महाजस गुण अवलंबन, निर्भय परि-  
 णति व्यक्तिरे । निज० । ज्ञाने ध्याने अति  
 बहुमाने, साधे मुनि निज शक्तिरे । निज० ॥ ५ ॥

अर्थ - श्री महाजस देवना पूर्ण निर्मल गुण  
 जाणी तेज अवलंबने अने गुणध्याने अने अति  
 सन्माने भवि जीवो निर्भयपणे आत्मगुणनी आत्म

परिणतिनी पूर्ण प्रगटना पामे मुनिश्चो एम निज  
शुद्धात्म शक्ति साधे ॥ ५ ॥

सकल अजोग अलेस असगत, नाहि होवे  
सिद्ध रे ॥ निज० ॥ देवचंड आणामें खेले, उत्तम  
युहि प्रसिद्ध रे ॥ निज० ॥

अर्थ - अने मन वचन काया तथा अन्य सब  
पुद्गल योग रहित तथा लेश्या रहित अत्र पर संम  
रहित होय एटले भोगादिकथी नाही घोई सिद्ध  
थई शिघ्र महेशमा शिवयधु मगें आदि अनत स्व  
तत्र आनंद भोगने, देवचंड मुनि क हेवे के जे जिने  
श्वरनी शुद्ध स्यादाद आणामा खेळवु तेज उत्तम  
सिद्धि सुख पामवानु, उत्तम प्रसिद्ध साधन षे ॥६॥



॥ अथ पचम श्री विमलजिन स्तवन ॥

॥ राग-कडम्बो ॥

धन्य ! तु धन्य तु ! धन्य ! जिनराज तु,  
 धन्य ! तुज शक्ति व्यक्ति सनूरी ॥ कार्य क-  
 रण दश सहज उपगारता, शुद्ध कर्तृत्व परि-  
 णाम पुरी ॥ धन्य० ॥ १ ॥

अथे:-हे ! श्री विमलनाथ स्वामी तु धन्य !  
 के मोहदिक सकल कर्म शत्रुने जीती आत्म मत्ता-  
 भूमि पोताने तावे श्री अखंड राज्य भोगवा छो.  
 बली ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादिक ताहरूं धन छे.  
 बली धन्य ! तमने के हमारा सरगवा रक जीवोने  
 सहज आत्म शुद्धतारूप धन दर्शावी धनवत करो  
 छो ० आदि अक प्रकार, तमने धन्य ! छे धन्य !  
 तमारी शक्ति के जे महा तेजवंत व्यक्त (प्रगट)  
 धई छे ज्ञानादिक सकल गुणकार्यरूप कार्यदशा  
 तथा ते कार्यना कारण रूप छती पर्यापनी प्रवृत्ती  
 एम नये कारण दशा ए बने तमारी तमारामा  
 अभेदपणे छे बली हमारा पण आत्म सिद्धि कार्य-

ना परम कारण तमेज छो वली प्रभुजी कारण  
 विना सहज स्वभावे भवि जीवोने उपकार कर छे,  
 ज्ञानादि अनेक कार्यानी कर्तृती पूर्ण पर्याये अने  
 पूर्ण परिणामे करो छो एटले परपरिणामिकता  
 टाली शुद्ध सदुभाव परिणामे आत्मीक अनन्त कार्य  
 करो छो ॥ १ ॥

आत्म प्रभाव प्रतिभास कारज दशा,  
 ज्ञान अविभागि परजय प्रवृत्ते। एमं गुण सर्व  
 निज कार्य साधे प्रगट, क्षेय दृश्यादि कारण  
 निमित्ते ॥ धन्य०। २।

अर्थ:-हे प्रभुजी, तमने पोतानाज प्रभावयी  
 स्वसिद्धिरूपकार्य सिद्ध करवु भास्यु तेथी ज्ञानादि-  
 कना छती अविभागि पर्यायो कार्य मन्मुख प्रवर्त्या  
 एटले ममस्त गुणोना छती अविभागी पर्यायो आप  
 आपणा कार्य मन्मुख प्रवर्त्या तेथी प्रगटपणे कार्य  
 सिद्ध भयु अने क्षेयनु जाणवु तथा देखवु ते निमित्त  
 कारण मात्र छे पण उपादान पणे तो पोताना छती  
 पर्यायो सकल स्वस्वकार्यमां प्रवर्तवाथी कार्य सिद्धि  
 घाय छे एम हमार पण छती पर्यायो पर प्रवृत्तीमा

जोडायेला छे त्याथी तोडी हमारा ज्ञानादि आत्म  
कार्य मन्मुख प्रवर्शाधीशु तो हमारु पण कार्य सिद्ध  
धरो एमां कई शका नथी ॥ ३ ॥

दास बहु मान भासन रमण एकता, प्रभु  
गुणालपनी शुद्ध थाये । बधना हेतु रागादि  
तुज गुण रसी, तेह साधक अवस्था उपाये ।  
धन्य तु ॥ ३

अर्थ - ताहरी आज्ञा सेववावाला ताहरा दासने  
ताहरा गुणो नो परम आदर बहु सन्मान आववायी  
ताहरा गुणो य गार्थ भासने अने रमण पण तमारा  
शुद्ध गुणोमां थाय अने साधकना परिणाम विषया-  
दिक पुद्गल गुणोमा जाटायला ते त्याथी छुटी  
ताहरा शुद्ध गुणोमा एकत्वपणे रमे ते साधक प्रभु  
गुण आलपनी थई पोताना ज्ञानादिक गुणो राग  
रहित करी शुद्ध थाय अने कर्मबधना हेतु रागादि  
तथा मन इंद्रियो आदि पर गुण रसी हता ते प्रभु  
गुण रसी थई पोतानी शुद्ध सिद्धिनी साधक दशा  
उपजावे पटले बध हेतुता टली मोक्ष हेतु थाय ॥३॥



कम जजाल थुंजनकरण योग जै, स्वामी  
भक्ति रम्या थिर समाधि दान तप शील व्रत  
नाथ आणा विना, थईय बाधक करे भव  
उपाधि ॥ थन्य० ॥ ४ ॥

अर्थः—पंच इंद्रियो अने मनवचन कायाना योग  
परद्रव्यमा रक्त थई कर्म जजाल निपजोव छे, ज्यां-  
सुधी प्रभुनी आज्ञा जाणी आदरी नथी त्यासुधी  
आत्मा कर्मचेतनापणे अने कर्मफलचेतनापणे परि-  
णम्या थको पुद्गल क्रियाथी सुख थाय एटले पुद्गल  
त्याग ग्रहण प्रवर्तिथी सुख थाय छे एम जाणा अणे  
योगो अने पचे इन्द्रिय पुद्गल क्रियामा प्रयुजे ते  
बडे आठे कर्मनी जाल गुपी पोतेज तेमा फसायो  
बधायो रहे पण ज्यारे प्रभुनी आज्ञा जाणे सन्माने  
आदरे त्त्यारे ते पंचेन्द्रियो अने अणे योग थिर समा-  
धिमा रमे अने प्रभुनी आज्ञा बहारनु दान शील  
तप व्रतादि भावधर्म विना एकाते इहलोक आहा-  
रादि अर्थे, परलोक इवादि अर्थे, अपम न टालवा  
अने मानमेलवचा अर्थे जेजे अनुष्ठानो आदर ते ते  
कर्मवचना कारण थई भवउपाधिने बधारनारथाय ४।

सकल परदेश समकाल सवि कार्यता,  
 करण सहकार कर्तृत्व भावो ॥ द्रव्य परदेश  
 पर्याय आगमपणे, अचल असहाय अक्रिय  
 दावो ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

अर्थ:-प्रभुने सर्वे समय समकाले सर्वे कार्यनी  
 कारणताना करण रूपे छती अविभागी पर्याय अ  
 नता छे ते छतीपर्यायरूप करणनी प्रवृत्ति रूप कार-  
 णनी सहाये सर्वे कार्य समकाले थया करे छे पण  
 द्रव्यना प्रदेशरूप पर्याय आगममां कल्या प्रमाणे  
 अचल असहाय अने अक्रियपणे छे एटले प्रदेश  
 काई कार्य करता नथी पण प्रदेशने आधारे छती  
 अविभागी पर्यायो रह्या तेज कार्य करवाना कार-  
 णपणे प्रवृत्ति छे ॥ ५ ॥

उत्पत्ति नाश ध्रुव रुर्वदा सर्वनी, पट्टगुणी  
 हानीवृद्धि अन्धूनो ॥ अस्ति नास्तित्व सत्ता  
 अनादि थको, परिणामन भावथी नहीं अ-  
 नूनो ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

અર્થ-તે છતી પર્યાયો સર્વે સર્વદા કાર્યપણે  
 ઉપજે અને કારણ પણે શી વિણસે વલી કાર્યપણેથી  
 વિણમી કારણપણે ઉપજે વલી આવીર્ભાવપણે ઉપ  
 જે અને તીરાંભાવપણેથી વિણસે વલી તીરાં ભાવપણે  
 ઉપજે અને આધીર્ભાવપણેથી વિણસે વલી પદ્મગુણી  
 વૃદ્ધિ જાણા પણે ઉપજે વિણસે તેની વિગત -

છતી પર્યાયમાથી જે પ્રદેશે સામર્થ્યભાવે અ  
 નત પર્યાયા આઘ્યા છે તેથી અન્ય પ્રદેશે તેજ સમ  
 યે અનતગુણા પયાય સામર્થ્યપણે આવે વલી તેથી  
 અય પ્રદેશે તેજ સમયે અસઘ્યાતગુણા પર્યાયા  
 સામર્થ્યપણે આવે-ઉપજે વલી તેજ સમયે તેથી  
 અન્ય પ્રદેશે સઘ્યાતગુણા પયાય સામર્થ્યપણે ઉપજે  
 વલી તેજ સમયે અન્ય પ્રદેશે અનતમે ભાગે પર્યાય  
 સામર્થ્યપણે ઉપજે વલી તેજ સમયે અન્ય પ્રદેશે  
 અસઘ્યાતમે ભાગે પર્યાયો સામર્થ્યપણે ઉપજે વલી  
 તેજ સમય અય પ્રદેશે સઘ્યાતમે ભાગે પર્યાયો  
 સામર્થ્યપણે ઉપજે એજ પ્રમાણે જુદાં ભેદે સામર્થ્ય  
 પણેથી વિણસે અને તીરાંભાવે ઉપજે જમ પદ્મગુણી  
 જાણો અને વૃદ્ધિનો ઉત્પાદ અને વ્યય જક સમય

समकाले थाय ज्या हाणीनो व्यय त्या वृद्धिनो उत्पाद् अने ज्या वृद्धिनो व्यय त्या हाणीनो उत्पाद् एम प्रदेशे आश्रित तिर्जकताए हाणी वृद्धि सम-जवी. हवे समय आश्रित उर्द्धताए पद्गुण हाणी-वृद्धि कहीए छीए तेनी विगतः-

प्रथम समय ज प्रदेशे अनंता पर्यानो सामर्थ्य-पणे उत्पाद् हतां अने तीरोपणानो व्यय हतो तेज प्रदेशे अन्य समये तेथी अनतगुणा पर्यायनो सामर्थ्यपणानो उत्पाद् अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असंख्यातगुणा पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद् अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी सख्यात गुणा पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद् अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी अनतमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद् अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असं-ख्यातमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद् अने तीरोपणे व्यय वली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी सख्यातमे भागे पर्यायनो सामर्थ्यपणे उत्पाद् अने तीरोपणे व्यय थाय एम समय आश्रित पण

स्वद्गुण हाणीवृद्धि जाणवी ते उर्द्धताण हाणीवृद्धि  
 कहीण एम मिद्वानमा विविध प्रकारे हाणीवृद्धि  
 कही छे ते मिद्वानोयी सवजी लेयी ग्रथ गौरव  
 माटे अहिंआ विशेष लख्यु नथी अहिंआ स्वद्गुण  
 हाणीवृद्धि कही ते समासथी समजवी पण अन  
 ताना अनत, असख्याताना असख्यात अने स-  
 ख्याताना सख्यात भेद छे मे सर्वे मलीने अनत  
 गुण हाणीवृद्धि समजवी

ए पद्गुण हाणीवृद्धि रूप परिखमन करु तेम  
 सर्व समय अस्ति अस्तिरूप परिणामे, नास्ति ना  
 स्तिरूप परिणामे, ज्ञानपर्याय ज्ञानपणे, दर्शनपर्याय  
 दर्शनपणे, वर्णपर्याय वर्णपणे, गंधपणे ए आदि जे  
 जे द्रव्यमा जे जे सामान्य विशेष स्वभाष होय  
 ते ते सर्वे समय ते ते रूपेज परिणामे एम परिख  
 मन धर्म अनादिथी सर्व द्रव्यमा ते काई नथी तथी  
 नथी अने जूनो मटतो नथी पण नधि नधि स्वगुण  
 परिणतिण परिणामे, यत भगवई अगे - "अतिथ  
 ते अतिथत परिणमयी नतिथ ते नतिथत परि-  
 णमयी" एटले काई द्रव्य स्वस्वरूप अगर

स्वस्वभाष छोडे नहीं अने अन्य स्वभावने ग्रहे नहीं  
 पण मिथ्यात्वी घहिरात्मा जीवनी द्रष्टी आत्मस्व-  
 भाव घाहिर घर्त्ते छे तेथी पोताना शुद्ध परिणमन  
 तरफ द्रष्टी विना ते शुद्ध भावने जाणी आदरी  
 शक्तो नथी एटलेज पुद्गल परिणतिमां पोतानु  
 कार्य मानी ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि गुणोने पुद्-  
 गल परिणतिमां रोके छे तेथी स्वगुणो अचरायी चल  
 अने मलीन धई शुद्ध स्वगुण कार्य करी शक्ता नथी  
 तेथी शुद्ध स्वतंत्र परमाणदनो भोग केम लेई शकाय ।  
 अर्थात् नज लेई शकाय माटे विमल जिनेश्वरना  
 विमल वचनो हृदयमां धारी परम सन्माने प्रसु  
 आलचने घर्त्त ते मकल दुःखथी निवृत्ति परमाणंद  
 प्राप्त करे, चली सर्वे द्रव्यने पदगुण हाणी वृद्धिमां  
 कोई समय पण न्यूनपणुं के अधिकापणु धनु नथी  
 द्रव्यमा अगुरुलघुनु एक अखंड चक्र छे ते सर्वे  
 समम परिणमे-करे प्रदेश गते हाणी वृद्धि करे  
 वाय पण द्रव्य स्वभावे तो गुरु लघु थतो नथी  
 तेथी अगुरुलघु नामे ए गुण जाणवो, पचास्ति  
 द्रव्यने स्वद्रव्ये स्वक्षेत्रे स्वकाले अने स्वभावे अस्ति  
 पणु छे अने परद्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभा

रूप ध्वानी सत्ता स्वद्रव्यादिकमा नथी एटले पर  
 द्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव रूप न थवा दे  
 वानी सत्ता द्रव्यमा छे तेनेज नास्तिस्वभाव कही  
 ए. एम सदा स्वद्रव्यादिके रष्टेद्यु ते अस्तिस्वभाव  
 अने परद्रव्यादिके ध्वानी स्वभाव पोतामा नही  
 ते नास्तिस्वभाव कहीए ते नास्तिस्वभाव पण  
 द्रव्यमा छतो छे आस्तिस्वभाव सर्वे समय स्व  
 द्रव्यादिकने छतीपणे राखे अने नास्तिस्वभाव ते  
 परद्रव्यादिकपणे न थवा दे ए अने स्वभाव द्रव्यना  
 द्रव्यथी अभेदपणे जाणवा एम नित्य स्वभाव,  
 अनित्यस्वभाव, भेदस्वभाव, अभेदस्वभाव, भव्यस्व  
 भाव, अभयस्वभाव एम द्रव्यना सामान्स चिदो-  
 पादि अनेक स्वभाव द्रव्यमा द्रव्यथी अभेदपणे छे  
 तेमांथी मुख्यपणे कोई कोई ठेराणे ओछा अधिका  
 मुख्य स्वभाव दर्शान्या छे पण द्रव्य अनन्त स्व  
 भावी छे ते सबे स्वभावना परिणमन भाव मति

अनादिना छे पण नवो परिणमन भावी  
 नथी सर्वे समय थाप आपणी परिणामिक  
 कोई द्रव्य के कोई गुणो के कोई पर्यायो चूके  
 कोईनी परिणामिकता कोईथी राकाय नहीं

माटे शुद्धात्म परिणामिकता अखड जाणी निर्भय  
 निराकूलपणे स्व दृती पर्यायना अनंत स्वतत्र था  
 नदमा मत्र रहेवु. ज्यासुधी आत्म शुद्धतानु ज्ञान  
 नथी त्यासुधी जीव विभावतामा रमी दुःखी रहे  
 छे पण शुद्धात्म ज्ञान थया आदर-या पछी विभाव-  
 तानो अश रष्टे नहीं तो दुःख शाने होय ? माटे  
 थात्मा पूर्ण स्वगुण पर्यायने जाणी परमानद भोगी  
 थाय माटे अवसर पामी प्रमाद छोडी शुद्ध सदा-  
 गम मेवी परमानद भोगी थवु एज उपदेश छे ॥६॥

ईणी परे विमल जिनराजनी विमलता,  
 ध्यान मन मंदिर जेह ध्यावे ॥ ध्यान पृथक्-  
 त्व सविकल्पता रंगथी, ध्यान एकत्व अवि-  
 कल्प आवे ॥ ७ ॥

अर्थ:-ए प्रमाणे विमल जिनेश्वरनी पूर्ण विम-  
 लता ऊलखी मन मंदिरमां विमलतानु ध्यान ध्याय  
 ते प्रत्येक द्रव्यनां भिन्न भिन्न गुण पर्यायना भिन्न  
 भिन्न विचार रूप पृथक्त्वचितर्क नामा सविकल्प  
 ध्यान रगे करी करे तेज पुरुष स्वगुण पर्याय



स्वद्रव्यधी अभेदपणे जाणे अने तेनेज एकत्वपणे  
 विरल्प रहित शुद्ध शुक्लध्यान आवे पण जिन  
 आज्ञाधी जे विमुख छे ते सूत्रना अभिप्राय जाणया  
 विना ध्येय केचो अने ध्यान विधि केवी तेन ते  
 शुजाणे ? अर्थात् नज जाणे माटे सदगुरु मगे  
 रहि शुद्ध ध्येय अने शुद्ध ध्यान विधि जाणी शुक्ल  
 ध्यान माटे उद्यम परिणामी थयु पटलेज घनघाती  
 कर्मनो नाश करी शकाय ॥ ७ ॥

उक्तंच “ जो जाणइ अरिहंते, द्रव्य गुण  
 पञ्जवतेहि ॥ सो जाणइ अप्पाण, मोहो  
 खलु जाहि तस्त लय ” वीतरागी असगी  
 अनगी प्रभु, नाण अप्रयास अविनाश धारी ॥  
 देवचद्र शुद्ध सत्ता रसी सेवता, सपदा आत्म  
 शोभा वधारी ॥ धन्य० ॥ ८ ॥

अर्थ:-प्रभुने राग सर्वांशे नाश थयो छे अने  
 पर द्रव्यादिकनो सग नधी तथा औदारिकादि पुद्-  
 गलीक विनाशीक अण पण नधी तधी ज्ञान दर्शन  
 थरख अने पीर्पादि अनंत गुणो परम निर्मल अने

थिर धया छे अने अग रक्ति तथा पर संग रहिन  
 धया साटे ते गुणो मलिन थवाने निनिन्न पण नयो  
 अने जेना ज्ञानादि गुणा, विनाप्रयासे रुहज न्व-  
 तत्रपणे सकल समय पूर्ण पर्याये प्रगटपणे वर्त्ते ते  
 अने पोतानु आत्म अग अने आत्मिक विद्वि छन्न-  
 कालसुधी अक्षय अविनाशीपणे प्रगट सिद्धमा  
 पाम्या छे पहवाचार निकायना हेवांमा चंद्रमा  
 समान शुद्ध सत्ता रसी प्रभुजीने शुद्ध मत्ता रमीओ  
 धई सेवे ते स्वभाविक आत्मीक सपदा थारी  
 थाय ॥ ८ ॥

सपूर्ण ॥

॥ अथ पष्ठम श्री सर्वानुभूति जिन स्तवन ॥

॥ जगजीवन जगपालहो ॥ ८ देखी ॥

जग तारक प्रभु वीनवु, विनतदी अव-  
 धारे ॥ तुज दरदान विण हू मभ्यो, काल  
 अनत अपाररे ॥ जग० ॥ १ ॥

अर्थ.-शुद्धात्म अनंत गुण पर्यापनो सकल  
 समय जेन अनुभव विलास छे, एवा सर्वानुभूति  
 नामा छद्वा तीर्थकर जग जीवोना तारक तपारा

आगल हु अरज करु छु ते माहरी अरज अवघारा  
 तमारा सरग्या उपकारीनी थाणा अणजाणना  
 तमारा दर्शावेला जीवादिक नव पदार्थना भाव मने  
 दर्श्या नहीं स्पांसुधी देहादिकनी ममताए ज्ञाना  
 धरणादिक थाठ कर्म बांधी भव चनमा भूलो भग्नी  
 अनादि अनत अपार काल आज सुधी मैं बहु  
 बहु दु'ए सखा ॥ १ ॥

सुहम निगोद भवे वस्यो, पुद्गल परि  
 अह अनत रे ॥ अव्ययहारवणे भस्यो, क्षुल्लक  
 भव अत्यंतरे ॥ जग० ॥ २ ॥

अर्थ -सूक्ष्म निगोदमा अनत पुद्गलपरावर्तन  
 कर्या अने अनत कालसुधी व्यवहार राशीमा पण  
 आव्यो नहीं बलवत पुरुषना एक श्वासो श्वासमा  
 अहार धावत जनस्यो अने सत्तर वतत मरण कर्यु  
 एम क्षुल्लक भय अत रहित कर्या घली कपाय  
 अने मारणातिक समुद्रघातनी वेदना वारवार सहा  
 बिभ्राम न पास्यो ॥ २ ॥

व्यवहारे पण तिरिवि गते, ईग वण खड

असत्री रे ॥ असख्य परावर्त्तन थयां, भमियो  
जीव अधन्नरे ॥ जग० ॥ ३ ॥

अर्थः—व्यवहार राशीमा आख्या पक्षी पण ति-  
र्यच गतिमा एकेंद्रिय वनस्पति अने असंज्ञीपणामा  
असख्याता पुद्गलपरावर्त्तन करया एम मारा ज्ञान  
दर्शनादि निज धन विना अधन्न एह्वो हु नीच  
पणामा भम्यो ॥ ३ ॥

सूक्ष्म थावर चारमें, कालह चक्र असख्य  
यर ॥ जन्म मरण बहुलां करयां, पुद्गल  
भोगनी क.खरे ॥ जग० ॥ ४ ॥

अर्थः—वली पृथ्वी, अणु, तेज अने वायु ए चार  
सूक्ष्म म्थावरमा असख्याता क लचक्रसुधी उपज्यो  
मरयो, एम पुद्गल भोगनी आकाक्षाए तथा  
आहारादि चार सजा वशी अथाग जन्म मरण  
कृत्या ॥ ४ ॥

ओघे वादर भावमें, वादर तरु पण ईमरे  
॥ पुद्गल अढी लागट वस्यो, नाम निगोदे  
मरे ॥ जग० ॥ ५ ॥

शुद्ध स्वजाति तत्त्वने, बहुमाने तल्लीनरे ॥  
 ते विजाती रसता तजी, स्वस्वरूप रस  
 पीनरे ॥ जग० ॥ ११ ॥

अर्थ-जे पुरुष शुद्ध स्वजाती तत्त्व व० आत्म  
 जाती थी उपन्या जे शुद्ध ज्ञान दर्शन चरण सुम्भ  
 वीर्यादिक सार तत्त्व तेनो रसीओ धर्य तत्त्वबहुमाने  
 तत्त्वमा लीन थयो ते विजातो के० पुद्गलधी उपन्या  
 वर्ण गंध रस स्पर्श आकार शब्द उद्योग कान्ती  
 द्वाया प्रभा लोही मास धीर्य त्वचा रत्न मणि  
 भाणेक सुवर्ण रूपु देव देवी नर नारी तिर्पच सत्तान  
 क्रुद्धुम्व आदारिकशक्ति वैक्यशक्ति आहारकशक्ति  
 तैजसशक्ति कार्मणशक्ति ए आदि जे जे पुद्गलोधी  
 उपजे ठे ते सर्व पुद्गल जाती णटले आत्माने ए  
 विजाती ठे ते सकल विजानीना रस आस्वादाने  
 तजे ते पोताना ज्ञान वीर्यादि शुद्ध स्वस्वरूप रसे  
 पुष्ट थाय णटले सकल कर्म अरि नाश करबानी  
 उत्कृष्ट शक्ति पामे अने जानादि स्वगुणोमा अचल  
 धीर्य रूप परम स्थिरता पामे ॥ ११ ॥

श्री सर्वानुभूति जिनेश्वररू, तारक लायक

आधार ए व्यक्ति ॥ जि० ॥ से० ॥ ७ ॥

अर्थः—हु तीर्थक्षरोनाज वचनथी जाणु छुं के एकांतता रूप भावरोग नाश करवा माटे वैद्य ते तो जिनेश्वर छे अने जिनेश्वरनी आज्ञाए वर्त्तवा रूप जिनभक्ति तेज भावरोग नाश करवानो उत्तम ईलाज छे माटे देवचद्र मुनि रुहे छे के माहरे तो अरिहत देवनोज आधार छे के एमना वचन आश्रित हु मारा भावरोगने दूर करी आत्मसिद्धि वरू ए प्रगट छे ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टम श्रीदत्तप्रभु स्तवन ॥

॥ राग धमात्त ॥

जिन सेवनते पाईये हो, शुद्धात्म मकरंद ॥ ए आंकणी ॥ तत्त्व प्रतित वसत ऋतु प्रगटी, गई सिसिर कुप्रतीत ॥ ललना दुरमति रूनी लघु भई हो, सदबोध दिवस वदीत ॥ ललना ॥ जिन० ॥ १ ॥

अर्थः—जिनेश्वरनी आज्ञा सेववाथी आत्म शुद्धता, . . . . . सीए. जेम भमरो स-

एटले ससारसमुद्रनो सहजे पार पाम्या, जेम अ पाढमुनि नाटकणीने घेर रथ्या अने नाटरु करता छता पण एकत्व अनित्यभावनाए शुद्धात्मतत्त्व विचार करता एटले अत्प प्रयासे केवलज्ञान पाम्या एम भरतादिक अनेक जीयो अत्प प्रयासे केवल ज्ञान पामी सिद्धि वरथा छे अने माहारा सरग्याने केटलाक षधा कारण मल्या अने प्रयास कर छे तो पण तरता नधी तेनु शुकारण ? ॥ ५ ॥

कारण जोगे साधे तत्त्वने, नवि समरथी  
उपादान ॥ जि० ॥ श्री जिनराज प्रकाशो  
मुज प्रते, तेहनो कोण निदान ॥ जि० ॥  
से० ॥ ६ ॥

अर्थ.—केटलाक मात्र एकांत कारण जोगप्रवृत्ति ए तत्त्व साधधा इच्छे छे पण उपादान सभालता सुधारता नधी जेम कोई घट करवानो अर्थो दह-बडे चक्र फेरव्या करे एथा कारण प्रवृत्तिना अनेक क्रिया फोडाफोड़ी वरससुधी करथा करे पण घटनु उपादान जे मृतिका ते माहे पिंड थास कोस पृथु

बुद्ध ग्रीवादि घटपर्यायना यथायोग्य जेवा घाट हे  
 तेवा मृत्तिका पिंडमां काहे नहीं अने मात्र बाह्य  
 कारणप्रवृत्ति फोडाफोडी थी पण अधिककालसुधी  
 करथा करे तोपण ते घट नियमा धरानो नर्या तेंम  
 कोई जीव आत्मसिद्धि प्रर्थे एकाते कारणप्रवृत्तिनी  
 क्रिया अनतकालसुधा कर अन उत्सर्ग आत्मसं-  
 गमां सम्पत्, धिरता, अप्रमादना, अकंपासता,  
 धिरता आदि जे जे पर्यायो सिद्धमा हे तें नें  
 पर्यायोनु आत्मअगमा संपादान करे नई तो कांई  
 काले पण आत्मसिद्धि थाय नहीं पण सिद्ध भंग-  
 वतमा शुद्ध द्रव्यपर्याय अन शुद्ध गुणपर्यायादिनुं  
 जेनु स्वरूप हे तेनु स्वरूप आत्मअगमा संपादान  
 करे एटले आत्मा आत्मपरिणाम उदं आत्म संपदा  
 दान आत्मान एटले पाने पानां भायें नांज मिद्धि  
 रूप कार्य थाय. ते ता प्रसुखादाना उजागने एकांत  
 तानो भावराग सत्तामां रक्षे उ नें गी नें कार्यसिद्धि  
 केम करी शके ? तो हे गिणां अने धनायां हे  
 एकांतता रूप भावरोगनु कट निदान मृ हे ? ११-१  
 भाव रोगना वैद्य सिद्धेयुक्त, भावोपव ड  
 भक्ति ॥ जि० देवसेने श्री अग्निहोत्रे ३



आधार ए व्यक्ति ॥ जि० ॥ से० ॥ ७ ॥

अर्थ—हु तीर्थक्षरोनाज वचनधी जाणु छु के एकातता रूप भावरोग नाश करवा माटे वैद्य ते तो जिनेश्वर छे अने जिनेश्वरनी आज्ञाण वर्त्तवा रूप जिनभक्ति तेज भावरोग नाश करवानो उत्तम ईलाज छे माटे देवचद्र मुनि कहे छे के माहर तो अरिहत देवनोज आधार छे के एमना वचन आश्रित हु मारा भावरोगने दूर करी आत्मसिद्धि वरू ए प्रगट छे ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टम श्रीदत्तप्रभु स्तवन ॥

॥ राग घमाल ॥

जिन सेवनतें पाईये हो, शुद्धातम मकर-  
 रद ॥ ए आकणी ॥ तत्त्व प्रतित वसत ऋतु  
 प्रगटी, गई सिसिर कुप्रतीत ॥ ललना दुर-  
 मति रञ्जनी लघु भई हो, सदबोध दिवस  
 वदीत ॥ ललना ॥ जिन० ॥ १ ॥



सादिरे ॥ जग० ॥ १२ ॥

अर्थः-जे कार्यनुजे शरण होय ते कारण घडेज  
ने कार्य थाय ए अनादिनी नि शक रीत ते माहारा  
आत्म सिद्धिना निमित्त कारण आजधी प्रभुजी  
तमेज छो ॥ १४ ॥

अविसंवादन हेतुनी, द्रढ मेवा अभ्यासरे ॥  
देवचंद्र पद निपजे, पूर्णानंद विलासरे ॥  
जग० ॥ १५ ॥

अर्थ.-भव्ये ससारधी नारनार प्रभुजी अचि  
सवाद हेतु छे जे भव्य तेमनी द्रढ मेवा क० आज्ञा  
द्रढ परिणामे सेववानो अभ्यास राखे ते देवमा  
चंद्रमा समान पूर्णानंद पदवीनो विलास पामे ॥१५॥



॥ अथ श्री सतम श्रीधरजिन स्तवन ॥

॥ रसीयानी देशी ॥

से मुख मुख प्रभुने न मली शक्यो, तो  
सी बात कहाय ॥ जिणंदजी ॥ निज पर  
वीतक बात लहो सहु, पण मने किम पतित  
आय ॥ जिणंदजी ॥ से मुख० ॥ १ ॥

अर्थ - श्रीवत श्रीधरस्वामीने हु पोते मुखे मुख  
मली शक्यो नहीं तो शी बात कहिये ? जो मुखे  
मुख हु मल्यो होत तो मनमान्या प्रश्नो करी कंखा  
मोहनीनो उतावलो नाश करतो. पोताने अने अ-  
नत अन्य जीवोने वीती वीते छे अने वीतशे ते  
सर्वे तमे जाणो छो तोपण मने केम पतित थाय के  
प्रभुजीअे माहरी अरज स्वीकारी ? ॥ १ ॥

भव्य अभव्य परित्त अनंत नो, कृष्ण  
शुकलपक्ष धार ॥ जि० ॥ आंराधक विराधक  
रीतनो, पूछि करत निरंधार ॥ जि० ॥ से  
मुख० ॥ २ ॥

अर्थ - भव्यजीवो अने अभव्यजीवो ए चने अनंता अनता छे तेमा हु भव्य छुके अभव्य छु ! वली कृष्णपक्षी अने शुक्लपक्षी जीवो तेपण अनता छे अटले जे चरमपुद्गलपरावर्त्तने वर्त्त छे ते शुक्लपक्षी जाणवा अने जे अचरपुद्गलपरावर्त्तने वर्त्त छे ते कृष्णपक्षी कहीण तेमा हु शुक्लपक्षी छु के कृष्णपक्षी छु ! वली जे जिने-वरनी आज्ञामा वर्त्त छे ते मोक्षमार्गना तथा आत्मशुद्धताना आराधक छे अने जे तीर्थकरोनी आज्ञा बाहिर वर्त्त छे ते प्रसुआणाना, मोक्षमार्गना अने आत्मशुद्धताना विराधक छे तेमा हु आराधक छु के विराधक छु ! ए आदि प्रश्नो पूछी निरधार करत ॥ २ ॥

किण काले कारण केहवे मले, थासे मुजने हो सिद्धि ॥ जि० ॥ आत्म तत्त्व रुची निज सिद्धिनी, लहिशु सर्व समृद्धि ॥ जि० ॥ से मुख० ॥ ३ ॥

अर्थ:-माहरे कए काले अने कीण कारण मल बाधी सिद्धि धरो ? वली क्यारे हुं आत्मतत्त्व



चरचा खेल ॥ ल० घाघक भावकी नदना हो,  
बुध मुख गारिको मेल ॥ ल० ॥ जि० ॥ २ ॥

अर्थ:-शुद्धात्म साध्य साधवानी रुचीरूप तथा  
खाति मृदुता रज्जुना निस्पृहता आदि आप आपर्णा  
रुडी सखीओ मली तथा सम सवेग निर्वेद आस्ता  
अनुकपादि अनेक मित्रो मल्या अने ते सर्वे इ द्वात्म-  
गुण चर्चारूप खेल खेलवा लाग्या अने होली उपर  
जेम लोको उघाडी गालो धोले छे तेम बुद्ध पुरुषो  
घाघक भावनी निदारप उघाडी गालो धोलवा  
लाग्या ॥ २ ॥

प्रभु गुण गान सुछंदशु हो, वाजित्र अति-  
शय तान ॥ ल० शुद्ध तत्त्व बहुमानता हो,  
खेतल प्रभु गुण ध्यान ॥ ल० ॥ जि० ॥ ३ ॥

अर्थ - तीर्थकरोना ज्ञानादिकव्यक्तगुणो निर्भय  
सुधदपणे गावा लाग्या अने अपाघापगमन अति-  
शय, घचनातिशय, ज्ञानातिशय अने पूजातिशय-  
रूप वाजिधर्मा अद्भुत तान लाग्यु शुद्धतत्त्वना

बहुमानपणे प्रभुगुण ध्यानमां एटले शुद्ध सिद्ध गुण  
ध्यानमा खेलवा लाग्या एटले अन्य ध्येयमा जतुं  
चित्त घाली शुद्ध ध्येयमां धिरतायेरमण करयुं ॥ ३ ॥

गुण बहुमान गुलालसो हो, लाल भए  
भवि जीव ॥ ल० गंग प्रशस्तकी धूममें हो,  
विभाव विंडारे अतीव ॥ ल० ॥ जिन० ॥ १४ ॥

अर्थ:-श्रेयलजानी ओना गुणबहुमानरुप गुला  
लनी लाली सम्यक्दर्शनी ओना भगे घदी एटले  
प्रशस्त रागनी धूम मची तयो अतिशय विभाव  
द्वेदया लाग्या एटले ज्ञान दर्शन चरणादि गुणोनी  
उज्वलता अने धिरता घघया माही ॥ ४ ॥

जिन गुण खेलमें खेलते हो, प्रगट्यो  
निज गुण खेल ल० । आतस घर जातम  
रमे हो, समता सुमति वे मैल ल० । नि० ॥ १५ ॥

अर्थ:-एम भव्यने निज गुण रपाल खेलना  
शुद्धात्मगुण खेल प्रगट थयो त्यारे आत्मा पुंगल  
परिणतिरूप परघर छाडी स्वसुता मृमिरूप निज



घरमा शुद्धात्म परिणतिरूप सुमती साथे सुमतावंत  
आत्मानो मेलाप थयो ॥ ५ ॥

तत्त्व प्रतीत प्याले भरे हो, जिन वाणी  
रसपान ॥ ल० निर्मल भाके लाळी जगी हो,  
रिंझे एकत्त्वता तान ॥ ल० ॥ जिन० ॥ ६ ॥

अर्थ:-त्पारे पूर्ण तत्त्व प्रतीतरूप प्याळामा  
जिनवाणीरूप अमृतरस पान भरयु अने सुमता  
समिति आदि सर्वे परिवारे पीधु णटले जिनेश्वरनी  
आज्ञा सेववा परम बीर्यरूप लाली आत्मअगे प्रगट  
थई पक्षी शुद्धात्म स्वरूपमा अखंड रींभरूप एकतानु  
तान लाग्यु ॥ ६ ॥

भव वैराग अवीरशु हो, चरण रमण  
सुमहत ॥ ल० ॥ सामिति गुपाति वनिता रमे  
हो, खेले हो शुद्ध वसंत ॥ ल० ॥ जि० ॥ ७ ॥

अर्थ -वली भवभोग वैरागता रूप अवीर  
उढाव्यु णटलेआत्मा सुमतिसगे परम रुडा स्वभावा  
चरण्यामा लाग्यो ते वेला विनयवती पच समिति  
अने घण्य गुप्ति पोताना स्वामी स्वभावाचरणी

आत्मापासे खेलवा-रमवा लागी. एम स्वहृदमां  
एटले आत्म स्वप्रदेश हृदमां शुद्ध वसंत रयाल  
खेले ॥ ७ ॥

चाचर गुण रसीया लिये हो, निज साधक  
परिणाम ॥ ल० कर्म प्रकृति अरति गई हो,  
उलसात अमृत उद्दाम ॥ ल० ॥ जि० ॥ ८ ॥

अर्थ:-ते देवी भवि जीवरूप चाचर शुद्धात्म  
गुण रसी थई आत्म सिद्धि साधवाना परिणामी  
थया एटले मिथ्यात्वादिक हेतु प्रवृत्तिए निपजापां  
जे ज्ञानावरणादिक कर्म तेथी अज्ञान मिथ्यात्व  
कषाय आदिकनी अरति थई हती ते गई अने ज्ञान  
दर्शन चरण वीर्यादि निज शुद्ध गुण रूप अमृत  
प्रगट धयु-उर्द्धताए आव्यु एटले उलस्युं उलसात धयु  
विभाष सधधे वधायेलु आत्मवीर्य मिथ्यात्वादि  
कधी छूटी उर्द्धताए आव्यु वधधी छूटी उपा साधुं  
तेनु नाम उद्दाम कहिए ॥

धिर उपयोग साधन मुखे हो, पिचकाकी  
भार ॥ ल० ॥ उपशम रस भरी छांटता गई

अर्थ -प्रशस्त राग पढे पर जीवोने जिन आ-  
 ब्रामां रूची उपजाववी ते निमित्त कारणनो एक  
 भेद छे दशमा गुणठाये सज्वलननो राग रहे  
 त्यांसुधी प्रवचननी भक्तिण प्रेरथो जीव पर जीवने  
 जिन शासनमां साधवानो परिणामी होय छे ते  
 परिणाम पण निमित्तनो एक भेद छे अने पछी  
 सकल विकल्पो छोडी ज्ञान दर्शन चरणमय एक  
 अभेद आत्म भावमा धीरता पामे छे एज प्रमाणे  
 साधक जीवोना ज्ञान दर्शन चरणादि गुणो आत्मा-  
 धो अभेदपणे धया छे एटले निर्विकल्प शुद्ध  
 समाधि पाम्या छे ॥ ११ ॥

इम श्रीदत्त प्रभु गुणे हा, फाग रमे मति-  
 वत ॥ ल० ॥ पर परिणति रज धोयके हो,  
 निरमल सिद्धि वसत ॥ ल० ॥ जि० ॥ १२ ॥

अर्थ -एम मतिवत पुरुषो श्रीदत्त स्वामीना  
 शुद्ध गुणोनां चित्त रमाववा रूप फाग रमे तेथी  
 अनादिनी परपरिणतिरूप जे मेल लाग्यो छे ते शुद्ध  
 स्वरूप रमण रूप सवर नीरमा मीलता कर्म रज  
 रूप मेल घोई निर्मल सिद्ध धई शिषपुरीमा वसे ॥१२॥

पुरुष कुटुंबादि विषयो दातारने मित्र जाणवा अने  
 सम्यक्ज्ञान दर्शन चरणात्म धीर्घना दातारने गच्छु  
 प्राय जाणघा, विषय रोगना उपचारने सुख जाणघु  
 अने शुद्धात्म सयममाहे दुःख जाणघु, कारणने  
 कार्य जाणघु अने कार्यने कारण जाणघु, अपवादने  
 उत्सर्ग तथा उत्सर्गने अपवाद जाणघो, पुण्य पाप  
 रूप शुभाशुभ परिणामने धर्मरूप शुद्ध परिणाम  
 जाणघो तथा शुद्ध भावधर्मने पुण्य पापरूप शुभा-  
 शुभ परिणाम जाणघो, उन्मार्गने मार्ग अने शुद्ध-  
 मार्गने उन्मार्ग, आश्रयने सवर अने संवरने आश्रय  
 अने अयध अने अयधने यध, अकर्त्ताने कर्त्ता अने  
 कर्त्ताने अकर्त्ता, अकारणने कारण अने कारणने  
 अकारण, अकार्यने कार्य अने कार्यने अकार्य,  
 अकारकने कारक तथा कारकने अकारक, अप्रमा-  
 णने प्रमाण तथा प्रमाणने अप्रमाण, कुनयने सुनय  
 अने सुनयने कुनय, कुवचनने सुवचन अने सुवचन-  
 ने कुवचन, ममभापीने विषमभापी, तथा चक्रभा-  
 पीने समभापी, उलटभावेने सुलटभाव तथा सुलट  
 भाव ए आदि विपर्यास वासनाना अस्तरयात  
 अभ्यवसाय ( अभिप्राय ) छे ते सर्वे, जडमूलधी

अर्थ -नवमा श्री दामोदर स्वामीना शुद्ध स्या  
 दादामृत रस भरथा वचन साभली आत्म अनात्म  
 आदि अनत तत्त्वोनी रुढी प्रतित करी उपयोग  
 थिर करी दामोदर स्वामीने परमेश्वारे वदीये गटले  
 तेमना वचन अने गुणो अति सन्माने आदरिये  
 जीवने अनादिथी विप्रयास वासना रूप मिथ्या  
 भ्राति छे तेनी विगत -

जीवमा अजीव बुद्धि, अजीव गुणपर्यायमा  
 जीव बुद्धि, शुद्धात्म स्वभावधर्ममा अधर्मबुद्धि,  
 अने पुद्गल क्रिया प्रवृत्तिरूप अधर्ममा धर्म बुद्धि  
 शुद्ध तत्त्वना जाण समभाषी गुरु उपर कुगुरु बुद्धि  
 अने जैन तत्त्वना अजाण उत्सृज्य भाषी स्वच्छदनाण  
 चालवावाला जैन भेत्वधारी अथवा अन्य भेत्वधारी  
 उपर सुगुरु बुद्धि, केवलज्ञान केवलदर्शन परम  
 थिरता अचल अनत धीर्यवत देव ऊपर अदेव बुद्धि  
 मिथ्याज्ञान मिथ्यादर्शन घपलतावत लल्लिचोये  
 हीण ऊपर देव बुद्धि, अष्टकर्मथी मुक्त धयेलाने  
 अमुक्त जाणवा अने अष्टकर्म यधन युक्त रागद्वेष-  
 वतने अध्या स्नेहपासमा यथायेलाने मुक्त जाणवा  
 ए पचेने विपरीत अथवा सरखा जाणवा तथा स्त्री

पुरुष कुटुंबादि विषयो दातारने मित्र जाणवा अने  
 सम्यक्ज्ञान दर्शन चरणात्म वीर्यना दातारने शत्रु  
 प्राय जाणवा, विषय रोगना उपचारने सुख जाणवु  
 अने शुद्धात्म सधममाहे दुःख जाणवु, कारणने  
 कार्य जाणवु अने कार्यने कारण जाणवु, अपवादने  
 उत्सर्ग तथा उत्सर्गने अपवाद जाणवो, पुण्य पाप  
 रूप शुभाशुभ परिणामने धर्मरूप शुद्ध परिणाम  
 जाणवो तथा शुद्ध भावधर्मने पुण्य पापरूप शुभा-  
 शुभ परिणाम जाणवो, उन्मार्गने मार्ग अने शुद्ध-  
 मार्गने उन्मार्ग, आश्रयने सवर अने संवरने आश्रय  
 व अने अयध अने अयधने यध, अकर्त्ताने कर्त्ता अने  
 कर्त्ताने अकर्त्ता, अकारणने कारण अने कारणने  
 प्रकारण, अकार्यने कार्य अने कार्यने अकार्य,  
 अकारकने कारक तथा कारकने अकारक, अप्रमा-  
 णने प्रमाण तथा प्रमाणने अप्रमाण, कुनयने सुनय  
 अने सुनयने कुनय, कुवचनने सुवचन अने सुवचन-  
 ने कुवचन, समभाषीने विषमभाषी तथा वक्रभा-  
 षीने समभाषी, उलटभावने सुलटभाव तथा सुलट-  
 भाव ए आदि विपर्यास वासनाना असंख्यात  
 अध्यवसाय (अभिप्राय) छे ते सर्वे जडमूलधी

उद्धेदिप मन वचन काया ए श्रणे जोगो सदा अत्रत  
 अने विषय कपायमा प्रवर्तें छे एटले ते रातदिन  
 सर्वे समय पचविषय, पचक्षत्रत तथा चारकपायधी  
 निवर्त्तता नधी एवी दुष्ट एटले आत्माने अनत दुःख  
 आपनारी अक्षरति परिणति अनादिधी लागेली  
 छे ते दुष्ट परिणति टाली विषयो अत्रतादिकर्था  
 निवृत्ति लेइ शुद्धात्मभावमा परमस्थिरता साधीए  
 मूल चार कपाय अने कपायना कारणरूप नर  
 नोकपाय तंधी आत्मअग अने आत्मगुणो कपाय  
 ठे एटले शोपाय ठे ते कपाय मेलधी उपजर्ता  
 कसमलता के० कलुपता कापी ने चरप्रधान निज  
 आत्म द्रव्य क्षेत्र काल भावमा परमशांति अने  
 परमममाधि अने परमस्तोपरूप समता सेचिए  
 एटले परद्रव्यादिकमा अनादिधी आपापणु मानेलु  
 छे ते स्वद्रव्य क्षेत्र काल भावमाज आपापणानी  
 बुद्धि धाय त्यारेज परम स्वतत्र शुद्ध शांति  
 तुष्टि पाय ॥ १ ॥

जंबूने हो भरत जिनराज के, नवमा अ-  
 तित्त चौबीशीये ॥ जस नामे हो प्रगटे गुण

आधार छे अथवा ताहरां प्ररपेला शुद्ध वचन प्ररु-  
 फनो आधार छे पण ताहरी जे आज्ञाथी उलटा  
 दुर्मतीथोना वचन आधार वरते छे तेने तो जेमां  
 मिथ्यात अज्ञान अने कषाय रूप ग्वारु पाणी भरयो  
 छे गढ़वा भवममुद्रमा प्रत्यक्षपणे इचता देखीए  
 छीण ताहरी आज्ञामा रहेबु एज ताहरु दर्शन.  
 तेथी जे सुखपामीण तेने नासारिक उपचरित सुख-  
 नी उपमा लागी शके नही. प्रभुजी तमे आत्मानी  
 अनत शक्ति पूर्ण पर्याये स्वस्वरूपपदे धारण करी  
 अने तमे ज्ञानादिक निज आत्म अनत धर्मना  
 परिणामी धया एटले कारकवक्त जे उलटुं फरतु  
 एतु ते पलटी सुलटयु एटले ज्ञान दर्शन चरणादिक  
 आत्मीक अनत गुणो सहज स्वतंत्रताए अन्य कारण  
 विना अने प्रयास विना सर्वे समय धमधोकार आप  
 आपणा कार्यमा लाग्या एटले पर परिणामीकतानो  
 अश'मात्र क्यां रहे ? अर्थात् नज रहे ॥ ३ ॥

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण  
 अखड स्वभावनो ॥ निज गुणनो हो जे वर्तन  
 धर्म के सहज विलासी दावनो ॥ तस भोगी



मरुधरमें हो जिम सुरतरु छुबके, सागरमें  
 प्रवहण समो ॥ भवभमतां हो भविजन आ-  
 धार के, प्रभु दरशन सुख अनुपमो ॥ आत-  
 मनी हो जे शक्ति अनतके, तेह स्वरूप पदे  
 धरथा ॥ परिणामिक हो जनादिक धर्म क,  
 स्व स्वकार्यपणे वरथा ॥ ३ ॥

अर्थ -मारवाह शरमा कल्पतरुनी लुयो के०  
 आम्नवृक्षना भूमता मलवा दूर्लभ तेम आ दुपम  
 काल पाचमा आरामा ताहरा अनत ज्ञान अनत  
 न्याय अने परम दयामयी उचन पर्यायोनी लुवा  
 मलवी घणा लोकोने दूर्लभ जाणवी अने हमने  
 प्रभुत्व पुण्य पसाए प्रभुवचननों लाभ थयो ते  
 आश्चर्य जेवु जाणी चित्तमा ध्यानद अने उल्लास  
 पामिए द्विए एटले भर समुद्रमा भोला खाताने  
 जेम द्रव प्रवहण आवी मले, तेम हमे पण ससार  
 समुद्रमा छुबकीधो खाताने ताहरा स्याद्वाद वचन  
 रूप द्रव जहाज आवी मल्यु, ते पण परमानदनुज  
 कारण छे भषभ्रमण करता भवि जीवोने ताहरोज

आधार छे अंधचा ताहरा प्ररूपेला शुद्ध वचन प्ररूप-  
 कनी आधार छे पण ताहरी जे आज्ञाथी उलटा  
 दुर्मतीअना वचन आधार वर्तते छे तेने तो जेमां  
 मिथ्यात अज्ञान अने कषाय रूप खारु पाणी भरयो  
 छे गहवा भवममुद्रमा प्रत्यक्षपणे डूबता देखीए  
 छीण ताहरी आज्ञामा रहेबु एज ताहरु दर्शन,  
 तेथी जे सुखपामीण तेने सासारिक उपचरित सुख  
 नी उपमा लागी शके नही, प्रभुजी तमे आत्मानी  
 अनंत शक्ति पूर्ण पर्याये स्वस्वरूपपदे धारण करी  
 अने तमे ज्ञानादिक निज आत्म अनंत धर्मना  
 परिणामी धया एटले कारकचक्र जे उलटु फरतु  
 हतु ते पलटी सुलटयु एटले ज्ञान दर्शन चरणादिक  
 आत्मीक अनंत गुणो सहज स्वतंत्रताए अन्य कारण  
 विना अने प्रयास विना सर्वे समय धमधोकार आप  
 आपणा कार्यमा लाग्या एटले पर परिणामीकतानो  
 अश मात्र क्यां रहे ? अर्थात् नज रहे ॥ ३ ॥

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण  
 अखड स्वभावनो ॥ निज गुणनो हो जे वर्तन  
 धर्म के सहज विलासी दावनो ॥ तस भोगी

हो तु जिनवर देव के, त्यागी सर्व विभावनी  
 श्रुतज्ञानी हो न कही शके सर्व के, महिमा  
 तुज प्रभावनी ॥ ४ ॥

अर्थ.-प्रभुजी अविनाशी अत्यतीक स्वतन्त्रीक  
 परम अने पूर्ण अखंड आत्मीक स्वभावे भग्न छो-  
 तमारा सर्वे स्वगुणो आप आपणा कायेमा सकल  
 समय वत्ते छे ते सहज स्वभाव विलासनी दास  
 तमारे आव्यो छे ते शुद्ध भावनाज तमे भोगी छो  
 अने सर्वे विभावनी त्यागी छो आठे कमेने जीती  
 वरप्रधान ज्ञान दर्शन गुणे देदिप्यमान छो. पूर्ण  
 श्रुतज्ञानी पण तमारा गुणादि प्रभावनी महिमा  
 कहि शके नहीं ॥ ४ ॥

नि कामी हो निःपाई नाथके, साथ हो  
 जो नित तुम तणो ॥ तुम आणा हो आरा-  
 धन शुद्धके, साधु हु साधकपणो ॥ वीतराग-  
 र्था हो जे गग विशुद्धके, तहीन भवभय  
 वारणो ॥ जिनचदनी हो जे भक्ति एकत्वके  
 देवचंद्र पद करणा ॥ ५ ॥

अर्थः--प्रभुजीकोईपण पुद्गल वस्तुना कामी नर्था एटले कपाय तो शानो होय ? अर्थात् नज होय. प्रभुजीनो साथ एटले प्रभुजी प्रमाणे हमे पण पर-गुण कामना रहित अने कपाय रहित सदा रहिए एहवो सदा हमारे साथ होजो अथवा सिद्धक्षेत्रमा हमारे तमारो निस्थ स्थिर साथ होजो. हमने शिव मार्गमा प्रेरनारा माटे अमारा नाथ अने प्रभुजी हमने कली गया के शुद्ध सिद्धमा आचो तेज तमारा वचन सफल थजो ए माटे तमारी शुद्ध आणा आराधी शुद्ध साथकपणो साथी आत्मसिद्धता पावु वीतराग देवधी इहलोकादि इच्छा रहित विशुद्ध राग तेज भवभयधी ठोडावनारो छे. एहवा सामान्यजिनोमां चंद्रमा समान तीर्थकर देवनी भक्तिमा एकस्वपणु तेज देवमां चंद्रमा समान सिद्धिपदलं कारण जाणवु ॥ ५ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ दशम श्री सुतेज जिन स्तवन ॥  
 अति रुडीरे (२) जिनजीनी विरता अति  
 रुडी ॥ ए थाकडा ॥

सकल प्रदेश अनती, गुण पर्याय शक्ति  
महती लाल ॥ अ० ॥ तसु रमणे अनुभववती,  
पर रमणे जे न रमती लाल ॥ अति० ॥१॥

अर्थ - दशमा श्री सुतेज स्वामीनी शुद्धात्म  
स्वभावमा स्वतंत्रता अकपता निश्चलता निरा-  
कुलता रूप परम धिरता अति रुढी साहामयी जे  
सर्वे प्रदेशे सर्व गुणोना पूर्ण पर्यायनी अनत महत  
सत्ता परम अचल वीर्यपणे सर्वे समकाले सकल  
स्वकार्यपणे वर्त्तवा छता पण धिरधोभ छे ते ज्ञाना  
दिक स्वगुण अनत पर्यायमा प्रभुजीनु रमण तेथी  
अनुभववती के० ते सर्वे शक्ति सकल समय अनु  
भव युक्त छे पण पुद्गलादिक परगुणने अनुभवती  
भोगवती नथी एतले परगुणमा रमती नथी धेनके  
चेतनामा स्वगुण भोग स्वप्रदेशे अस्तित्वपणे छे  
अने अन्यक्षेत्रा परगुण भोगनो स्वप्रदेशे अभाव  
तेथी स्वप्रदेशे परगुण भागनु नास्तित्व छे ॥ १ ॥

उत्पाद व्यये पलटती, ध्रुव शक्ति श्रीपदी  
सतो लाल ॥ अ० उत्तपादे उत्तपतमती, पूरव  
परिणति व्ययपती लाल ॥ अ० ॥ २ ॥



अनेक पर्याय रूप कार्य धवानी सत्ता सुवर्ण द्रव्य  
 यमां ध्रुवपणे रहे ठे ए प्रमाणे उत्पादु व्यय ध्रुव  
 जाणवो जो एम न होय तो द्रव्यनु द्रव्यपणु रहे  
 नहीं छती पर्यायोने जनक द्रव्य छे एटले छती  
 पर्यायोने आचीर्भावपणे द्रव्य जन्म आपे छे (उप-  
 जात्रे छे) एटले एक समयनु कार्य करी तेज छती  
 पर्यायोने पोतामा तिरोभावपणे समावे छे (द्रवे छे)  
 एटले पर्यायोने आगीर्भाव अने तिरोभावपणे उप  
 जाववु अने रागवु तेज द्रव्यनु द्रव्यत्वपणु छे  
 ताहरी धिरता नव पर्याये उत्पत्तीघत छे अने पूर्व  
 पर्याये व्ययघत छे एटले परिणतिमां परावर्त्तन धर्म  
 छे तेथी पूर्व पूर्व परिणति व्यय धर्म नवा नवा समय  
 नवि नवि परिणतिण परिणत्या करे एमज सर्वे  
 समय सत्ता उत्पादु व्यय ध्रुव थया करे एटले कोई  
 समय उत्पादुना पण नाश नथी व्ययनो पण नाश  
 नथी अने ध्रुवतानो पण नाश नथी माटे द्रव्ये प्रकारे  
 पण स्वभाव श्लाघमान नथी पण धिर छे एटले  
 धिरताज पूर्व परिणति रूपथी पलटी नवि परिणति  
 रूप उपजे छे अने सत्ताण ध्रुवज छे माटे धिरतानो  
 उत्पादु व्यय ध्रुव जाणवो एम तमारुं स्वरूप महा

सादि लाल ॥ अ० ॥ जेहने बहुमाने प्राणी,  
पामे निज गुण सहनाणी लाल ॥ अ० ॥ ५ ॥

अर्थ:-संग्रह नयथी सत्ता अनादिथी शुद्ध अने  
धीर छं पण ज्यारे शुद्ध थीरता प्रगट थई त्यारे ते  
एवभूतनयथी सादि कहिए. ते थीर शुद्ध सत्तानु  
बहुमान जे भवि करे ते पोतानी थीर अने शुद्ध  
सत्तानु अहिठाण ( स्थानक ) पामे एटले प्रभुजीनी  
शुद्ध सत्ता घ्यातो भवि पोतानी शुद्ध सत्ता  
स्थानक पामे ॥ ५ ॥

थिरताथी थीरता वाधे, साधक निज प्रभुता  
साधे ॥ लाल ॥ अ० ॥ प्रभु गुणने रगे रमता,  
ते पामे अविचल समता ॥ लाल ॥ अ० ॥ ६ ॥

अर्थ:-शुद्ध सत्तामां अंतरमुहूर्त मात्र उपयोग  
धीर करिण तो ते सादिअनत शुद्ध सत्तामा थीरता-  
नु कारण थाय छे जेम घट्टना बीजथी घट्टनी वृद्धि  
थाय घली अग्नि अशथी महा अग्नि प्रगट थाय तेम  
कर्मबीजथी कर्मनी वृद्धि अने राग बीजथी रागनी  
वृद्धि, ज्ञान अंशथी ज्ञाननी वृद्धि अने दर्शन अशथी



अर्थः—साहरी शुद्ध अने थिर सत्ता ते स्वप्रभा  
वेज हेदिप्यमान छे एटले दीपती दीपाघती छे पण  
अतिशय योगे एटले काई पुद्गल अतिशय रूप पर  
योगे दीपती नथी, बली पर भावना योगे छानी  
पण रहेती नथी जेम जाकमा घणी जातनो ममालो  
नाखीण तेमा लूणनी खाराय पर योगे छाना रहेती  
नेथी पण पोतानी व्यक्ति देखाडेज छे तेम प्रभुजीनी  
थिर सत्ता परयोगे पण रुपो रहेती नथी ते सत्ता  
शुद्धात्म तरबमा लयलीन छे शुद्धात्म तत्त्वथी सदा  
अभेद छे जूदी पडती नथी चेननादिकु द्रव्यना  
अनंत लक्षणनी स्थिरता कोई अन्य पुरुष ब्रह्मादिकनी  
करेली नथी तेम कोई शकरादिकु अन्य पुरुष त्रिनाश  
करवा समर्थ नथी बली विष्णु आदि अन्य पुरुष  
तमारी सत्ताने राखी शके तम नथी पण तमारी  
थिर सत्ताना रक्षक ग्राहक व्यापक अन कर्ता  
भोक्तादि तमे पोतेज छो एटले काईनी सत्ताना  
कोई अन्य द्रव्य ग्राहक व्यापक रक्षक कर्ता भोक्ता  
दि नथी एम सम्यक् प्रकार सत्तानी स्थिरता  
जाणवी ॥ ४ ॥

संग्रह नयथी जे अनादि, पण एवंभूते

नामि नामि नामि नामि वीनवुं, सुगुणा स्वामी  
जिणद नाथरे ॥ ज्ञेय सकल जाणग तुमे,  
प्रभुजी ज्ञान जिणंद नाथरे ॥ नमि० ॥ १ ॥

अर्थ:-छु निज शुद्ध गुण विरह आतुरताए  
मोक्षाभिलाषी थई वारवार श्री सुगुणवान् स्वामी-  
प्रभु नामा अगीआरमा तीथंकरने नाम स्थापना  
द्रव्य अने भाव एम चारे निक्षेपे तथा द्रव्य क्षेत्र  
काल अने भाव तथा मन वचन काया अने शुद्ध  
उपयोग परिणामे नमस्कार करीने एटले पर द्रव्यमां  
अहपणानु तथा माहरी बुद्धिनु अभिमान छोडी  
अरज करू छु के प्रभुजी तमे तो अनत शुद्धात्म  
गुण पर्यापना स्वामी छो तेथी परम पुरुष छो अने  
स्वपर त्रीकालवर्ती अनत क्षेयना जाणग पासग  
छो तेथी ज्ञान दर्शन रूप सूर्य छो ॥ १ ॥

वर्तमान ए जीवनी, एहवी परिणति केम  
नाथरे ॥ जाणु हेय विभावने, पिण नवि छूटे  
प्रेम नाथरे ॥ नमि० ॥ २ ॥

अर्थ:-हे नाथ ! वर्तमान माहारा सरखा जीवो-

दर्शन वृद्धि अने तेमजथिरताएधीरता अश वधार-  
वाथी परम थोरता पामीए. माटे आत्मशक्ति षडे  
अशुद्धतानाअश नाश करवा अने शुद्धताना अशथी  
पूर्ण शुद्धता वधारी परम शुद्ध थीरता प्रगट करी  
परम थीरताना अनत परमानंद विलासी थवु ए  
उपदेश छे एमज मोक्षाभिलापी जीव साधकपणु  
आदरी पोतानी परम शुद्ध थीरतानी प्रभुता साधे  
एम जिनेश्वरना परम शुद्ध थीर गुणोमा पोतानी  
परिणति रमाववावालो अविचल शुद्ध थीर समता  
पामी परम मिद्धता पामे ॥ ६ ॥

निज तजे जेह सुतेजा, जे सेवे धरि बहु  
हेजा लाल ॥ अ० ॥ शुद्धालवन जे प्रभु  
ध्याये, ते देवचद्र पद पावे लाल ॥ अ० ॥७॥

अर्थ -प्रभुजी पोताने तजे करी परम तेजवत  
छे एहवा प्रभुने जे बहू हितधारी पूर्ण प्रेम प्रतिते  
सेवे अने शुद्ध आलवन प्रभुने जे ध्याय ते देवमा  
चद्रमा समान परमात्म पद पामे ॥ ७ ॥

॥ अथ एकादशम श्री स्वामीप्रभुजिन स्तवन ॥

' रहो रहो रहो रहो बालहा ॥ ए देशी ॥

नामि नामि नामि नामि वीनवुं, सुगुणा स्वामी  
जिणद नाथरे ॥ ज्ञेय सकल जाणग तुमे,  
प्रभुजी ज्ञान जिणद नाथरे ॥ नामि० ॥ १ ॥

अर्थ:-छु निज शुद्ध गुण विरह आतुरताए  
मोक्षाभिलाषी थई चारधार श्री सुगुणवान् स्वामी-  
प्रभु नामा अगीश्वरमा तीथेकरने नाम स्थापना  
द्रव्य अने भाव एम चारे निक्षेपे तथा द्रव्य क्षेत्र  
काल अने भाव तथा मन चचन काया अने शुद्ध,  
उपयोग परिणामे नमस्कार करीने णटले पर द्रव्यमां  
अहपणानु तथा माहरी युद्धिनु अभिमान छोटी  
अरज करू छु के प्रभुजी तमे तो अनंत शुद्धान्न  
गुण पर्यायना स्वामी छो तेथी परम पुन्य छो अने  
स्वपर श्रीकालवर्ती अनंत क्षेयना जाणग पाहण  
छो तेथी ज्ञान दर्शन रूप सूर्य छो ॥ १ ॥

वर्तमान ए जीवनी, एहवी परिणनि ईम  
नाथरे ॥ जाणु हेय विभावने, पिण नावि दृष्ट  
प्रेम नाथरे ॥ नामि० ॥ २ ॥

अर्थ:-हे नाथ ! वर्तमान माहात्म्य ईम

की एहसी परिणति केम ? हूं जाणं हूं के विभाव  
 प्रहा अयाय, दुःखदाता, भवभ्रमए अने परतत्रता  
 धरारनार अने ज्ञान दर्शनादि अन आत्म गुणोनी  
 हारणा करनार माटे हेय-तजवा लायक छे छता  
 पण ए उपरधी प्रेम केम दृष्टते. नया ? ॥ २ ॥

पर परिणति रस रंगता, पर ग्राहकता  
 भ.व नाथरे ॥ पर करता पर भोगता, इयो  
 थयो एह स्वभाव नाथरे ॥ नमि० ॥ ३ ॥

अर्थ -अधिर परतत्र अने जगत् जीवोनी एठ  
 आपणी ईच्छाए धर्त पण नही, आपणी ईच्छाए  
 रहे पण नही बली अनेक प्रकारे चपलता कराध  
 नारी एहसी निदवा लायक पुदुगल परिणतिमा  
 चित्त रींके छे रस लागे छे बली ते परपरिणतिने  
 ग्रहण करवाना बली ते माहे चि (ने व्यापवानो  
 तथा तेने समग्र करवानो तथा तेने भोगबवानो  
 तथा तेने निपजाबचा आदि हमारो भाध केम थयो  
 अन केम थाय छे ? ॥ ३ ॥

त्रिपय कषाय अशुद्धता, न घटे ए

धार नाथरे । तौ पण वळू तेहने, किम तरिए  
ससार नाथरे ॥ नमि० ॥ ४ ॥

अर्थ:-वली विपयो अने कपायो आत्म अंगणे.  
आत्म गुणोने अशुद्ध करवावाला ते माहणे अंग-  
मात्र आदरवा न घटे तो शु सुख जाणी आदरवा-  
वली क्यार ए दु:ख देना नथी के आदरवा-  
ए आदरवा न घटे ए निर्धार छे तो एद न-  
स्वखा तेने ईच्छे छे तो ससारथी केन नमि० ॥ ४ ॥

मिथ्या अविरति प्रमुखने, निज्जा अंगु  
दोष नाथरे ॥ नंदू गरहू वली अंगु. एद ने  
पामे सतोप नाथर ॥ नमि० ॥ ५ ॥

अर्थ -वली अज्ञान मिथ्या अंगु प्रमाद  
कपाय अने पुद्गल योग ते निज्जा अंगु अंगु  
दाता जाणु छु तेथी तेन अंगु अंगु अंगु अंगु  
समभे विदोषे नंदू छु अंगु अंगु अंगु अंगु  
दाई परिणामो राखी अंगु अंगु अंगु ए अंगु  
भूल छे ? ॥ ५ ॥

अतरंग पर रम्या, टलउये किणे उदर

नाथरे ॥ आण आराधन विना, किम गुण  
 बोद्धे थाय ना ॥ न० ॥ ६ ॥

अर्थ - ए आदि अनेक प्रकारनु अंतरग पर  
 रमण ने कथा प्रकार टलदो ? अने ए अंतरग पर  
 रमण जे न छोडे न तात्का थाज्ञा अने मोक्षमार्गनी  
 आराधकन थाय अने आणा आराधन विना ज्ञाना  
 दिक शुद्धात्म गुणोनी सिद्धि केम थाय ? ॥ ६ ॥

हवे जिन वचन प्रसंगथी, जाणी साधक  
 नीति नाथरे ॥ शुद्ध साध्य शचीपणे, करिए  
 साधन राति नाथरे ॥ न० ॥ ७ ॥

अर्थ - हवे प्रभुवचन प्रसंग थयो तेथी साधकना  
 नीति के० न्याय जाणयो तथी शुद्ध साध्य रुचिपणे  
 साधनरीनिण प्रवर्तिण णटले ज्ञान गुणे करीन शुद्ध  
 साध्य जाणीण, दर्शनगुणे करीने शुद्ध साध्य निश्चय  
 करिण-देखीण, चरणगुणे करी शुद्ध साध्य आचरण  
 सेवीण अने धीयगुणे करीने शुद्ध साधकनामां वल  
 कोरवीण, प्रीती, शुद्ध साध्यमां अने शुद्ध साध्य  
 दर्शावतारममा करीए, सकल पर कामना

शुद्ध साध्य सिद्ध करवाना कामी थीए, सुखनी  
 आशा अने श्वास शुद्ध साध्य सिद्धिमाज राखीए,  
 शुद्ध साध्य सिद्धि विना सुख नथी एम प्रतित्त  
 करीए, शुद्ध साध्य सिवाय अन्य वस्तुथी प्रेम छोडी  
 शुद्ध साध्यमाज प्रेम राखीए, बुद्धि मन घचन काया  
 ए सर्वे शुद्ध साध्य सिद्ध करवामा राखीए वापरीए  
 एम अतरग अनक परपद रमण छे तं छोडी शुद्ध  
 साध्य माह रगे चित्त रमावीए तोज ए अनादि  
 कालना दुष्ट विभाव शत्रु नाश पामे काचे भगोसे  
 सहज शत्रु पण पाछो हटतो नथी तो अनादि  
 कालना मोह शत्रु सहजे केम पाछो हटे ? तो वि  
 भाव नाश करवामां पूरे पूरु पुरुष पराक्रम फोरवीए  
 पण पौनानु पराक्रम शत्रुओना तावे करिणें नथी  
 अने विभाव नाश करवामाज वापरिए तो कर्म  
 शत्रुथी जय वरिए ॥ ७ ॥

भावने रमण प्रभु गुणे, योग गुणी आ-  
 धीन नाथरे ॥ राग ते जिन गुण रगमें, प्रभु  
 दीठा रति पीन नाथरे ॥ नमि० ॥ ८ ॥

अर्थ - परद्रव्यनी भावना छोडी प्रभुना शुद्ध



आत्मता पलटावता, प्रगटे संवर रूप  
नाथरे ॥ स्वस्वरूप रसी करे, पुरणानंद अनूप  
नाथरे ॥ नामि० ॥ ११ ॥

अर्थ.-पर परिणतिमा आत्मता मानी छे ते  
भेदज्ञाने स्वपर लक्षण भिन्न जाणी स्वद्रव्यादिकमा  
आत्मता मानिण स्वद्रव्यादिकमा कारण कारक  
कार्य जाणवे मानवे आदरवे आश्रय नाश भई  
सवर रूप प्रगटे जे जीव शुद्ध सिद्ध मम स्वरूप  
रसीयो थयो ते स्वरूप रसी पूर्ण अनत अनुभम  
आनंद प्रगट करे ॥ ११ ॥

विषय कषाय हर टले, अमृत थाये एम  
नाथरे ॥ जे प्रसिद्ध रूचा हुवे, तो प्रभु सेवा  
धरी प्रेम नाथरे ॥ नामि० ॥ १२ ॥

अर्थ -एम विषय कषय रूप हर के० जेर टली  
अमृत थाय अथवा विषय उपाय रूप हर के०  
६७-टेव टली सवर रूप अमृत प्रगट थय जे  
प्रसिद्धपणे शुद्ध साध्य सिद्ध करवा रुचिवत होय  
ते तीर्थकरोनी आज्ञा सेवचामा प्रेम प्रतीत राखे ॥ १२ ॥

कारण रगी कार्यने, साधे अवसर पावि  
 नाथरे ॥ देवचद्र जिनराजनी, सेवा शिवसुख  
 धाम नाथरे ॥ नमि० ॥ १३ ॥

अर्थ:-आत्म सिद्धिनां कारण परमेश्वरना वच-  
 नमां जेने रग लाग्यो ते अवसर पावी अवश्य कार्य  
 सिद्ध करे देवोमां चद्रमा ममान देवाधिदेव स्वामी-  
 प्रभुनी आणानु सेवनते शिवसुखनु स्थानरु छे।१३।

॥ संपूर्ण ॥

---

॥ अथ द्वादशम श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन ॥

॥ नमणी खमणी ने मन गमणी ॥ ए देशी ॥

दिठो दरिशाण भी प्रभुर्जानो, साचे रागे  
मनसुं भीनो जसु रागे निरागी थाये, तेहनी  
भक्ति कोने न सुहाये ॥ १ ॥

अर्थ-केवलज्ञान दर्शनादि अनंत लक्ष्मीवत  
अनंत शुद्ध प्रभुताना धणी मुनिसुव्रत स्वामी नामा  
चारमातीर्थकरनु दर्शन दिहुके० प्रभुए जीयादि नव  
पदार्थादि अनेक शुद्ध तत्वो दर्शाव्या छे ते जेने दर्श्या  
रुच्चा प्रतीत थइ तेन दर्शन थयु कहीए ए दर्शन  
जेने थयु तेप्रभु गुणोमा साचा रागे मनधी भीनो  
जेने रागे धीतराग पद पामीए तेनी भक्ति कोने न  
गमे ? अक्षयत् सुज्ञ पुम्पोने तो प्रभु आणा भक्ति  
गमेज पण प्रभु आज्ञाना फलधी जे अजाण छे ते ता  
मूढपणामा न मुभाई रक्षा छे यतः “ नाथाईसु गुणेषु  
अरिहताईसु धम्म रूवेसु ॥ धम्मोवगरण साहम्मी  
एसु धम्मज्ज जो य गुण रागो ॥ सो सुपसद्धो रागो  
धम्म सयोग कारणो गुणदो ॥ पढम कायव्वो सो,  
पस गुणे खबई त सव्व ” ॥ १ ॥

वर्तनारे लाल, सवि जाणे असहायरे ॥ सा०

॥ प्र० ॥ ३ ॥

अर्थ-ज्ञानना अविभागी छती पर्यायमाथी कोई पर्याय कोई काले पण नाश धाय नहीं अने तेज अविभागी छती पर्यायो छतीपणे रहिन सामर्थ्यपणे आवे ते पण अछतीपणे धता नथी एटले छतीपणानो नाश नथी, मात्र तिरा अने आवीर्भाव धर्या जाय ज्योनी नवे नवे समय नवि नवि वर्तना धाय ते अन्य द्रव्यनी सहाय विना अने प्रयासविना जणाय देवाय ॥ ३ ॥

धर्मादिक सहु द्रव्यनारे लाल, प्राप्त भणी सहकार रे ॥ साहि० ॥ रसनादिक गुण वर्तनारे लाल, निज क्षेत्रे ते धाररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ४ ॥

अर्थ-धर्मादिक अजीव द्रव्य प्राप्त धर्याने सहायकारी छे एटले धर्मास्तिकायना जे प्रदेशमा गति परिणामी जीव पुद्गल आवी प्राप्त धाय तेने ज ते गतिसहाय आपे, अधर्मास्तिकायना जे प्रदेशमा स्थिति परिणामी जीव पुद्गल आवी प्राप्त धाय तेने ज ते स्तिर सहाय आपे, आकाशना जे प्रदेशमा

जीव पुद्गल, आर्षी प्राप्त थाय मले तेनेज ते अव-  
 काशदान आपे पण अन्य प्रदेशे रह्याने आपे नही,  
 बली चार अश स्निग्ध के रक्ष व्यक्तिमा जे पुद्गल  
 परमाणु हाय त तेज क्षेत्रमा तेथी वे अश न्यून  
 के अधिक स्निग्ध रक्ष गुण व्यक्तिवाला अन्य  
 पुद्गल परमाणु आर्षी प्राप्त थाय ता तेनी साथे त  
 मले पण अन्य आकाश क्षेत्रे रहेला स्निग्ध के रक्ष  
 वे अश न्यून अधिक व्यक्तिवाला पुद्गल परमाणु  
 अगर खध साथे मले नहि अने कार्मणादि वर्गणा  
 जीव प्रयोगे परिणमेनी जे आकाश क्षेत्रमा होय त  
 त आकाश प्रदेशमा रहेला अन्य वर्गणा साथे मले  
 ए प्रमाणे धर्मास्तिकायादि चारे अजीव द्रव्यने अन्य  
 प्रदेशे रहलाने चलावतु, थीर रान्वतु, अवकाश  
 आपतु, के मलतु थतु नथी, चक्षु तथा मन विना  
 रसनादिक चार इंद्रियोने व्यजनायग्रह छे एटले  
 स्वादवाली वस्तु जीव प्रदेशने मले अने स्पर्शवाली  
 वस्तु स्वचाने मले अने गंधना पुद्गल नाशीका  
 अदर घ्राणाइंद्रियने मले-स्पर्श अने शब्दने पुद्गल  
 श्रोतइंद्रियरूप पहदाने मले-स्पर्श तोज तेना रोध  
 था , ए पांचे इंद्रियो वर क्षेत्र विषयी कही हे पण

रसनादिके चार इंद्रियोने तो ते विषयोना पुढुगल स्वक्षेत्रमां आवी मले तेनेज स्पर्श छे अने चक्षु इंद्रियने तो पुढुगल पदार्थे ऊपर पडेलु सूर्यादिनु उद्योत किरण परावर्त्तन थई चक्षुमा आवे त्यारे बोध थाय छे तेथी तेने व्यंजनावग्रह कळो नथी पण उद्योत किरण वस्तु ऊपर पडी परावर्त्तन थई आत्ममा आच्या विना तेनो बोध थतो नथी अने प्रभुजीना केवलज्ञानमां तो क्षेत्रे काले दूर निकटना पण रूपी अरूपी सर्वे पदार्थनो समताले बोध थाय छे ॥ ४ ॥

जाणग अभिलाषी नहिरे लाल, नवि प्रतिधिबे ज्ञेयरे ॥ सा० ॥ कारक शक्ते जाण-बुरे लाल, भाव अनत अमेयरे ॥ सा० ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभु परब्रह्मने जाणमाना अभिलाषी नथी थने अन्य ज्ञेयोनु प्रतिधिब पण पोतानी जाय-कतामां पडतु नथी पण जीयमा अनत गुणोना कारक चक्र आप आपणा कार्यपणे दर समय करे छे तेमां ज्ञान कारक चक्रमा नवा नवा समपनी

सार मानैलो छे पण मोहरी ज्ञायकर्ता मोहरां द्रव्य  
 क्षेत्र काल अने भावमा तत्त्व जोषी सतोष अने  
 तृप्ती वाली धाय तो ते समता रस अनुभवे ते तो  
 सुमति जिन स्वामीए सुमति सेववा आदरवानी  
 पतायी तेमा व्यापे तोज वने ॥ ७ ॥

बाधकता पलटाववारे लाल, नाथ भक्ति  
 आधाररे ॥ सा० प्रभु गुण रगी चेतनारे लाल,  
 पहीज जीवन साररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ८ ॥

अर्थ -हमारी अनादिनी बाधक भावे परिण  
 भेली आत्म परिणतिने पलटावी साधक भावमा  
 लायवा तुम सरखा प्रभुनावतनी आणा सेववी  
 एज हमारे परम पुष्ट आधार छे ए माटे चेतना  
 प्रभु गुण रगी करवी एज आ चातनु जीवन अने  
 सार छे ॥ ८ ॥

व्यवहार सात नये करी करे ते रुचि कहीये

(१) चीतरागना गुणोनो राग अने चीतरागनी  
आजा सेवानी रुचि ते नैगम नये भक्ति कहीए ।

(२) ज्यारे भव्य जीव छेल्लु यथाप्रवृत्तिकरण  
करे त्यारे सग्रह नये भक्ति कहीए. ए करणमा  
मत्तापणे जिन प्ररूपित तत्त्वतो अभिलाषी जीव छे ।

(३) जिन चचनमा जे आचार क्रिया अनुष्ठान  
सेवयानुं करत ते, विष गरल अने अन्योन्य अनुष्ठान  
स्यागी मोक्षार्था जीष भेदज्ञानादि श्रुत वाचना,  
पृच्छना, परिग्रहना, अनुप्रेक्षा, धर्मकथा तथा वि  
नय वैषाचच्छादि आत्म शुद्धनामे तद्दहेतु क्रिया अने  
शुक्लध्यान रूप अमृत क्रिया विधिने सेवे ते व्यव  
हार नये भक्ति कहीए ॥ २ ॥



सुख पाये नहीं अने दुःखी रहे पण जेने शिवगती  
 ऐ० शिव चाल छे एहवा जिनकर देखनी थाज्ञा  
 सेववी ते परम दुर्लभ ने पण पर परिणतिने जे रूढी  
 रीते त्यागे—दूर करे तेने ए सेवा सुलभ छे जे  
 जीव सत्तावल प्रकारे अथवा तो अनेक प्रकारे आ  
 अब तजी सुवरयत थाय तेन पुरुष जिन आज्ञामा  
 परम लीन भई पुष्टपणे जिन आज्ञा सेये. अनेक प्रकारे  
 आश्रय कर्ता पण ते परबस्तुना राग रूप एक अशुद्ध  
 उपयोगमांज समाप छे अने द्वेष ते तो राग होय  
 तोज उपजे उक्तच "पर दण्ड रड यद्भर्ता विरव  
 भुंवेई अठ कम्मोहि, एतो जिण उयणसो, समामउ  
 पघ मोळव्हम " ॥ १ ॥

वीतराग गुण राग भाक्ति रुची नेगमे  
 होलाल ॥ भ० ॥ यथाप्रवृत्ति भव्य जांव नय  
 समइ रमे हो लाल० ॥ नय ॥ अमृत क्रिया  
 विधि युक्त वचन, आचारपी होलाल ॥ वचन० ॥  
 मोक्षार्थी जन भाक्ति करे व्यवहारपी हो-  
 लाल० ॥ करे० ॥ २,

व्यवहार सात नये करी कर ते महिण द्विये ।

(१) वीतरोगना गुणोनी राग अने पातरागनी  
आजा मेववानी रुचि ते नैगम नये भक्ति कहीण ।

(२) ज्यारे भय्य जीव छेल्लु यथाप्रवृत्तिकरण  
करे त्यारे सग्रह नये भक्ति कहीण. ए करणमा  
मत्तापणे जिन प्ररूपित तत्त्वनी अभिलापी जीव छे ।

(३) जिन वचनमां जे आचार क्रिया अनुष्ठान  
मेवयानुं करी ते, विष गरल अने अन्योन्य अनुष्ठान  
त्यागी मोक्षार्थी जीव भेदज्ञानादि श्रुत वाचना,  
पृच्छना, परिश्रद्धना, अनुप्रेक्षा,, धर्मकथा तथा वि  
नय वैषावच्यादि आत्म शुद्धनामे तद्दहेतु क्रिया अदे  
शुक्लध्यान रूप अमृत क्रिया विधिने सेवे ते, व्यव-  
हार नये भक्ति कहीण ॥ २ ॥

गुण प्राग्भावी काये तणे कारणपणे हो  
लाल ॥ तणे० ॥ स्तत्रयि परिणाम ते ऋजु-  
मूत्रे भणे हो लाल ॥ ते रुजु० ॥ जे गुण  
प्रगट थयो निज निज कारज कर हो लाल  
के ॥ निज० ॥ साधक भावे युक्तत शब्द नये  
ते धरे हो ला. ॥ शब्द० ॥ ६ ॥

अर्थ:-(४) ज्ञानादि अनंत आत्म गुणो शुद्ध प्रगट करवा रूप कार्यनो परिणामो थयो जीव ते मुख्य शुद्ध ज्ञान दर्शन चरणादिना परिणाम करे ते ऋजुसूत्र नये भक्ति कहीए (५) ज्ञानादिक शुद्धात्म गुण जे जे अशो प्रगट थई आप आपणु कार्य शुद्ध प्रगटपणे करवा लागे अने सर्व गुणो पूर्ण प्रगट करवानो साधक भाव आदरे त शब्द नये सेवा भक्ति कहीए ॥ ३ ॥

पेते गुण पर्याय प्रगटपणे कार्यता हो लाल ॥ प्र० ॥ उणे थाये जाव ताव सामि-  
रूढता हो लाल ॥ ताव० ॥ संपूरण निज भाव स्वकारय कीजते हो लाल ॥ स्व० ॥ शुद्धात्म निज रूप तणे रस लीजते हो लाल ॥ त० ॥ ४ ॥

अर्थ -(६) केवलज्ञान केवलदर्शन यथाख्यात् धारित्र अने परम अचल तीर्यगुणा अने पर्यायो प्रगटपणे आपआपणु कार्य करे धेत्याथीज ज्यासुधी सव्याभाव अक्षयस्थिति अटलअवगाहना अने अ गुरुलघु ए चार गुणोना अशा अर्थाती कर्म वशे

ज्यांसुधी पूर्ण प्रगट करया नथी त्यांसुधी समभि-  
 रुढ नये सेवा कहिए (७) शैलेसी करणना छेला  
 समथ आवे गुणोना सर्व अंश प्रगट निर्मल करया  
 अने ते सुरघ घाठ गुण जिवाय अनता गुणोना  
 पूर्ण अश प्रगट धया अने ते सर्व गुणो आपआपणु  
 कार्य पूर्ण पर्याये पूर्ण पदे करवा लाग्या त्यारे एव  
 नूत नये सेवा थई पंडले चीदमा गुणठाणाना चरम  
 रुसमे एवंभूतनये सेवा जाणवी ए स्थान ते पूर्ण  
 आत्म शुद्ध पर्यायनो लाभ ले छे त्यां एवंभूतनये  
 सेवा थई जाणवी मेवानु फल सेवा माथे मलेज  
 छे पण कालानरना वायदो नथी कोई फले व-मेवानु  
 फल तो ते भवे अथवा भयातरे पण फले ते तेन  
 कहीण क शुभ उपयोगवने शुभ कर्मदल बधाय ते  
 अशुक्रमे उदय आवे पण अहीआ तो शुद्धतानी वात  
 छे अन शुद्धतामा आत्मगुण प्रगट धयानो आनद  
 त ना तरतकात आवे छे अने जया गुणठारानु  
 कारण भाय छे, जेम सूर्य उरयो क तेज बध्वते अथ  
 कार नाठो अने उद्योत थयो तना आनद तेज बध्वत  
 आन्यो नेम अहीआ अशुद्धता नाठा अन शुद्धता  
 प्रगट थई न अशुद्धतानु दुःख गयु अने शुद्धताना

गुण एकत्वे थाय स्वगुण प्राग्भावता हो लाल  
स्वगुण० ॥

देवचंद्र जिनचंद्र सेवा मांहि रहो हो लाल ॥  
सेवा० ॥

अव्यावाध अगाध आत्म सुख नग्रहो हो  
लाल ॥ आ० ॥ ७ ॥

अर्थ.-तेम प्रभुर्था पवित्र राग ते आत्वर पूर्ण  
वीतरागता प्रगट कर, प्रभुना निर्मल गुणनु एकत्र  
ध्यान करपा री परिणति आत्मगुणथी एकर, प.मी  
पूर्ण गुण प्रगटे एम देवोमा चंद्रमा समान एवा  
शिवगति साद्देश्यतो सेवाया रती आत्मिक अनंत  
अव्यावाध अगाध सुरपते सादिप्रनतकाल सुधा  
भोगधो-रारो ॥ ७ ॥ स्वपूर्ण ॥,,

॥ अथ पंचदशम श्री आप्नाभाजन स्तवन ॥

॥ मन माह अमारु ४३ गुणे ॥ ११ देशो ॥

करो साचा रग जिनेश्वरू, सत्सार विरग  
सहू अन्यरे ॥ सुरपति नरपाति सपदा, ते तो

दुरंगधी कदन्नरे ॥ करो० ॥ १ ॥

अर्थ:-हे ! शाश्वत सुख अभिलाषी मज्यो !  
 तमो आस्ताग स्वामीना वचने अने आस्ताग स्वामीना गुणोमां साचो रंग करो ससार विरंग के०  
 ससारना अनेक प्रकारना जे घन विषय सन्मान  
 आयुष्य कृदुयादि तेमा मिथ्या दशाए रंग लागे छे  
 पण ते सर्वे विपरित रंग छे अने आत्मक्षेत्रपी न्या  
 रो विनाशीक भय भरेलो परंतत्र पूर्वापर फलेदा  
 युक्त छे देवोना पति ईद्रो अने मनुष्योना पति,  
 चक्रो राजाउ आदिनी सपदा जे अश्व गज स्त्री  
 आदि ते तो जगत् जीवनी णव, दुर्गंधीक अने सहे-  
 लां अनाज जेवी, विव्हलता करावना, पापकारी,  
 दीनता युक्त छे पण तेमा मोह मदिरानी छाके अश्व  
 धुध धया जीवोने सुग्न जणाय छे पण परमार्थ ते  
 रोग अने रोगना उपचार छे ॥ १ ॥

जिन आस्ताग गुण रस रमी, चल विपरित  
 विकार विरूप रे ॥

विण समकित मते अभिलक्षे, जिणे चार्यो

अर्थ - ज्ञानगुणना अविभागी छती पर्याय रूप  
 करणे वधतो वधतो अने नयो नयो ज्ञान गुण नि  
 मेल प्रगट थार्य तेम दर्शन चरणादि सर्वे गुणोना  
 छती पर्याय रूप करणे दर्शन चरणादिक गुणो पूर्ण  
 पर्याये निमेल प्रगटे अने सत्तागते ज्ञानावरण  
 दर्शनावरण अने मोहनीय आदिना रम (अनुभाग)  
 अन स्थिति दल सहित हेदे अने प्रदेश उदयथी  
 सक्रमण करी निर्भरा करे अने अज्ञान मिथ्यात्व  
 कषाय तथा जन्म मरण भय शोकादिनो सेद  
 टाळे ॥ ६ ॥

सहज स्वरूप प्रकाशार्थी, थाय, पूर्णानंद  
 विलासरे ॥ देवचंद्र जिनराजनी, करज्यो सेवा  
 सुख वामरे ॥ करो ॥ ७ ॥

अर्थ - सहज शुद्धात्म स्वरूप प्रकाश धर्वाथी  
 स्वतंत्र आत्यंतिक पूर्णानंद विलास प्रगट थाय माटे  
 देवचंद्र मुनि केहे छे जिनराजनी सेवामा रही शुद्ध  
 आत्म सत्ताभूमिमां स्वतंत्र सुखे वास करज्यो ॥७॥  
 ॥ ॥ ॥ संपूर्ण ॥

परात्मन तजी शुद्ध साध्य आलवने छेक बलगी  
 एटले प्रभुनी आया आलवनमा पण टकी तेथी निज  
 परिणति निज ज्ञानादिक शुद्ध स्वाभाविक आनंदसा  
 मय थई- रमवा लागी रही ॥ २ ॥

त्यागीने सवि पर परिणति रस रीझ जो,  
 जागी छे निज आत्म अनुभव ईष्टतारे लो ॥  
 सहजे छुटी आश्रव भावनी चालजो, जालम  
 ए प्रगटी संवर शिष्टतारे लो ॥ ज० ॥ ३ ॥

अर्थ:-पुद्गल परिणति रस रीझ त्यागीने आ-  
 त्म गुण अनुभव अभ्यासमां ईष्टपणु जाग्यु तेथी  
 सहजे अनादिनी आश्रव भावनी चाल-देव हती  
 ते छुटी एवी महा जोरावर संवर भावनी शिष्टता  
 व० उत्तम चाल प्रगट थई ॥ ३ ॥

वधना हेतु जे छे पाप स्थानजो, ते प्रभु  
 भगते पाम्या पुष्ट प्रशस्ततारे लोल ॥ ध्येय  
 गुणे बलम्यो पूरण उपयोग जो, तेहथी पामे  
 ध्याता ध्येय समस्ततारे लोल ॥ ज० ॥ ४ ॥



अर्थः-वध हेतु जे जे पापना स्थानक हतां ते प्रभु भक्तिप पलटी शुद्धात्म पुष्ट प्रशस्तपणे थयां ते नीचे प्रमाणे-

- (१) प्राणातिपातपणे जे परिणाम हतो ते पलटी द्रव्य भाव दया परिणामे परिणम्यो
- (२) अनृत वचन परिणाम हतो ते सत्य अमृता परिणामे परिणम्यो
- (३) अदत्त ग्रहणपणे परिणाम ते शुद्धात्म तत्त्व ग्राहकपणे परिणम्यो.
- (४) पुद्गल द्रव्य गुण पर्याय मथन रूप कृशिल परिणाम ते स्वगुण पर्याय समाधि कामी सहजानंद रमणी थयो
- (५) पर ग्रहण रूप परिग्रह परिणाम ते शुद्ध स्वगुण पर्याय ग्राही थयो
- (६) क्रोध परिणाम पलटी परम क्षमा रूप थयो
- (७) मान परिणाम मृदुता रूप थयो.
- (८) माया परिणाम आर्यव रूप थयो.
- (९) लोभ परिणाम मुक्ति सतोष रूप थयो
- (१०) राग परिणाम वीतरागता रूप थयो.
- (११) द्वेष परिणाम अद्वेष रूप थयो

- (१२) क्लेश परिणाम अक्लृप समाधि रूप थयो  
 (१३) अभ्याख्यान परिणाम सुभाषित थयो  
 (१४) पशुन्य परिणाम मिथ्यात्वादिक दुर्गुणोना  
 छिद्र मर्म जाणवा 'देखाडघाचालो' थयो  
 (१५) परपरिणतिमा रति अरति परिणाम हतो  
 ते विरति निवृत्ति रूप थयो  
 (१६) पर जीवना अपवाद घोलवा रूप परिणाम  
 हतो ते विभाव अपवाद घोलवारूप परि-  
 णाम थयो  
 (१७) माया मृपा परिणाम-ते अमाय सत्य रूप  
 थयो  
 (१८) मिथ्यात्व, घल्य परिणाम हतो-ते सम्य-  
 कत्व निःशक्य परिणाम थयो

एम् अठारु पाप-स्थानक पलटी निस्पाप अबंध  
 स्थानी थयां अशुद्ध उपयोग निर्मल थई अनत गुण  
 पञ्चमयी सहज शुद्धात्म ध्येयमा पूर्ण अखडपदे  
 लाग्यो-धिर थयो तेथी श्याता ध्येयनी पूर्ण मसाधि  
 पाम्यो ॥४॥

जे अति दुस्तर जलधि समो संसारजो,  
 ते गोपद सम कीधो प्रभु अवलबनेरे लोल ॥

जिन आलंबनी निरालंबता पामे जो, तेणे  
हम रमशुं निज गुण शुध नंदनवनेरे  
लोल ॥ ज० ॥ ५ ॥

अर्थ-संसार समुद्र तरघो अति दुस्तर हतो  
ते जेम गायना पगलाथी पृथ्वी उपर पहेला खाड  
मां भरायेलु पाणी सहजे उलघी जवाय तेम ते  
भवसमुद्र प्रभु आलबने तरघो अति सुगम थयो  
एम प्रभुना आलबने जे वर्से ते निरालबपणु पामे  
एटले ते पुरुषने कोई अन्य पुरुष के अन्य वस्तुनु  
आलबन लेवानी कदापी जरूर रहे नहीं ते माटे  
हमे प्रभु अबलबने निरालबता पामी निज शुद्ध  
गुण नदनवनमां आनदे रमीशु ॥ ५ ॥

साध्यादि निज प्रभुताने एकत्वजो, क्षा-  
यक भावे थाये निज रत्नप्रयीरे लोळ ॥  
प्रत्याहारी धारे धारणा शुद्ध जो, तत्त्वानदी  
पूर्ण समाधि लय मईरे लोल ॥ ज० ॥ ६ ॥

अर्थ-शुद्ध साध्य आदि निज प्रभुतामां एक-  
त्व परिणामे रमे एटले शुद्ध साध्य जाणी सिद्धि

पुद्गल आशा रागी अनेग, तसु पाते  
 कुण खाये फेरां ॥ जसु भगते निर्भय पद  
 लहिए, तेहनी सेवामां थिर रहिये ॥ २ ॥

अर्थ:-जे देवपणा घिना देव अने गुरुपणा विना  
 गुरु कहेवाग छे अने पुद्गल परिणतिना भीखारी  
 एवा अन्य जीवोनी अने पुद्गल परिणतिनी आशा  
 राखे छे तो ते भीखारी पामे भीख मांगनारा तेनी  
 पामे हमेशा घास्ने ? कयुसुख ? अने कयो गुण लेवा  
 फेरा खाईण ? जेनी भक्ति ए निर्भय निराकुल शुद्ध  
 स्वतंत्र शिव एद, पामाए तेज, नीतरागनी आशा  
 सेवामां थिर रहिए तेमनी आशा अने सेवार्थी  
 चलायमान थई महिरास्ने भावमां न जईए ॥ २ ॥

रागी सेवकथी जे राचे, बाह्य भक्ति देखी  
 ने माचे ॥ जसु गुण झेले तृष्णा आंचे, तेहनी  
 सुजस चतुर किम वाचे ॥ ३ ॥

अर्थ:-रागी धर्ता देव तथा गुरु कहेवाता  
 गृहया देव तथा गुरु पोताना सेवकोनी बाह्य भक्ति  
 देखीने तेउ उपर खुशी घाय छे, माचे छे, मग्न थाय

छ पण ते फहेवाता देव तथा गुरूना ज्ञानादि  
 क्षात्यादि गुण रूप धन ते भोग तृष्णाआचे दाझे  
 छे तेनो जस चतुर पुरुषो केम घाले ? जे पोनेज  
 आत्म धन हीण छे ते बीजा भव्य पुरुषोने आत्म  
 धने धनवत केम करी शके ? अर्थात् नज करी शक  
 माटे माहरे तो अर्चित्य आत्मीक धननो दातार  
 प्रभु तुज एक छे ॥ ३ ॥

अंतरंगं कालिमल सवि कपे ॥ ५ ॥

अर्थ:-एहवा देवनी भक्ति भव भयनी कापवा-  
वाली छे निश्चयधी प्रभु कोई अन्य द्रव्यने गुण  
दोष करता नथी पण व्यवहार नयथी शुद्ध नये  
देशना थापी अनेक भवि जीवोने ससार समुद्रधी  
पार उतारे छे अने सम्यक्ज्ञान दर्शन चारित्र्य थापे  
छे एम अनेक भविने गुण करे छे तेथी गुण करवानी  
शक्तिए करी गाजे छे एहवा प्रभुनी आज्ञा मैववा  
रूप दाम भाव जे आदरे ते स्वतंत्र आत्म शुद्धता  
रूप अनंत प्रभुता पामे अने अंतरगमा रथो जे  
कलुपता उपजावनार अज्ञान मिथ्यात्व अने कषा  
यादि विभावता रूप मेल तेने कापे ॥ ५ ॥

अध्यात्म सुख कारण पूरो, स्वस्वभाव  
अनुभूति सनूरो । तसु गुण वलगी चेतना  
कीजे, परम महोदय शुद्ध लही जे ॥ ६ ॥

अर्थ -श्री मुनिसुव्रत स्वामी आत्म अधिकार  
राज्य सुग्न प्राप्तनु पूर्ण पुष्ट कारण छे शुद्ध आत्म  
स्वरूप अणजागता जीव पोतानो आत्मरु अधिक-  
कार जाणे नहीं तेथी पुद्गल द्रव्य पर्यायने पोते

अने पोताना जाणी मानी तेना अधिकारी होते, थई  
अधिः अने परतत्र पुद्गलनु कर्ता भोक्ता ग्राहक  
स्थापक रक्षकपणु पोताना मानी वेठा छे. ते पुद्गलो  
आपणा राख्या रहे. जर्ही, कर्मा थाय नहीं बली  
पर-क्षेत्री पदार्थो, मोगवी शकाय नहीं बली लेवाय  
नहीं एम अणुहातु थाय नहि तेथी तेमा खेद करी  
फरी तेना विनाशो पोतानो विनाश आदि विपर्यय  
घामना परी रहि छे, तेथी जन्म मरणादिक अनंत  
दुःख भोगवे छे, पण ज्यारे प्रभु वचने आत्मा पोता  
नो आत्मोक्त अधिकार जाणे त्यारेज सकल क्लेशथो  
मुक्त थाय अने आत्मअधिकारनु अत्यंतो स्वतंत्र  
सहज सुख पावे तो ते अध्यात्मीक सुखनो दातार  
ता प्रभु अने प्रभु आणाना शुद्ध प्रेरक छे ते सिवाय  
अन्य कोई नर्था माटे परम अने पूर्ण उपकारो प्रभु  
जी तमे न छो जेम काई पुरुष परधर परधस्तु पर  
स्त्री आदिकनो अधिकारी नथी, अन परधर, स्त्री  
धस्तु आदिकनो अधिकारी पोताने मानी ते परधस्तु  
ने आदरे तां ते सुखो थाय नहीं अन दुःखी थाय  
पण ज्यारे पोतानो धर स्त्री आदि धस्तुनो अधिकारी  
पोताने जाणे माने आदरे त्यारेज दुःख मटे अने  
सुख पाय तेम आत्मा अन्य धस्तुनो अधिकारी

नहीं छतां पोताने अन्यै 'वस्तुनो' अधिकारी जाणै  
 जानीः आदरे तो ते दुःखी रहे, पण सुखी प्राय नहीं.  
 ज्यारे, पोतानो, अधिकार जेवो ते तेहवो जाणी जानी  
 आदरे तोज सकल दुःखी थी, निवर्त्ती अने परमा  
 नदनी प्राप्ति थाय अने प्रभुजी तो निज ज्ञानादि  
 'रिद्धिना अनुभव' भोगमा सदा तृप्त-मग्न छो महा  
 'तेजवत्' छो आपणी चेतना प्रभुना ज्ञानादिक, नि-  
 'र्मल' गुणे बलगी राखीए एटले। ज्ञानचेतना प्रगट  
 'थाय, चेतना अनादिथी कर्मफलचेतनापणे अने कर्म-  
 'चेतनापणे परिणमेली। चलगेली छे। ज्यासुधी चेतना  
 'कर्मफलचेतनापणे' एटले। उदय आवला शुभाशुभ  
 'कर्म फलमा राग द्वेषपणे परिणमे' छे तथा योग क्रिया  
 'प्रवर्त्तथीज सुख उपजे छे' एम जाणी क्रिया परिणा-  
 'ममा कर्मचेतना पणे वर्त्ते छे' त्यासुधी स्वरूप जानमा  
 लागती चलगती भथा पण ज्यारे प्रभुना, परम, नि-  
 'र्मल ज्ञानादि गुणे बलगे त्यारे, शुद्धात्म स्वभावमा  
 आनद जाणी शुद्धात्म स्वभावमा थिर रहेवा ज्ञान-  
 'चेतनापणे परिणम' मोटे आपणी चेतना प्रभु गुणे  
 'रसाली करीए एटलेज शुद्ध स्वगुण रसी थाय, एम  
 'परम महोदय, ६ • देवलज्ञानादि अनंत स्वगुण नि-



बिल पूर्ण व्यक्ति पामीए ॥ ६ ॥

मुनिसुव्रत प्रभु प्रभुता लीना, आत्म  
संपत्ति भासन पीना ॥ आणा रंगे चित्त धरी-  
जे, देवचद्र पद शीघ्र वरीजे ॥ ७ ॥

अर्थ:-जे जीव मुनिसुव्रत ह्यामीनी पूर्ण प्रभुता  
जाणी आश्चर्य पाम्या क अहो ! प्रभुजीनु परमज्ञान  
परमदर्शन परम धिरताए शुद्ध स्वपर्याय रम्यमाहे  
रमः अने परम अचल स्वतंत्र अबाधित धीर्य  
एम अनंत गुणोनी शुद्धतानो परमानंद जाणी चित्त  
लीन थयु तेनेज निजात्म शुद्ध सपदानु पुष्ट भासन  
थयु ए माटे तीर्थकरोनी आज्ञामा रंगे चित्त धिर  
करीए तोज देवचद्र मुनि कहे छे के शुद्धात्मपद  
वतावतु पामीए ॥ ७ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ त्रयोदशम श्री सुमतिजिन स्तवन ॥

॥ कान्हेयालाल ए देशी ॥

प्रभुस्यू इंस्यू विनवुरे लाल, मुज विभाव  
दुख रीतेरे साहबियालाल । तीन कालना  
क्षेयनीरे लाल, जाणो छो सहुनीतिरे साह



होय तेम थाण अने उद्यम, प्रण, भवितव्य प्रमाये  
 अने अने जे जे काले जे जे योग सभव छे ते तेम  
 पने एम पच समवाय मल्या कार्य थाय एमां कार  
 शका नथी, एमाथी कारे पण एकांतता ते सिध्यांत  
 छे ज्ञेय ज्ञान साथे मली एकमेक थाय नहीं, ज्ञान  
 ज्ञेय क्षेत्रे जाय नहीं अने ज्ञेयपण ज्ञान क्षेत्रे आवे  
 नहीं जेम दर्पणमा जे पदार्थो भासे छे ते पदार्थो  
 दर्पण साथे एकमेक थई जता नथी, दर्पण दर्पण रुपे  
 अने पदार्थ पदार्थ रुपे रहे छे तेम ज्ञान ज्ञान रुपे  
 अने ज्ञेय ज्ञेय रुपे रहे छे ए मर्यादा छे, प्रभुजी तमे  
 दूर आकाश क्षेत्रे रक्षा अप्राप्तमेय ज्ञेयने अने एक  
 आकाश क्षेत्रे रक्षा स्वपर प्राप्तमेय ज्ञेयने तथा  
 वर्तमान काले वर्तमान प्राप्त अप्राप्तमेय ज्ञेयने अने  
 अतित अनागत वर्तता अप्राप्तमेय ज्ञेयने क्षेत्रथी  
 अने कालथी दूर अने निकट एटले अप्राप्त अने  
 प्राप्तमेय ज्ञेयने जे जेम छे ते तेम, समकाले अशीय  
 पणे जाणो छो एटले कोई पण ज्ञेय एहचो नथी के  
 तमारी जायकतामा न भासे ॥ २ ॥

छति परजाय जे ज्ञाननरे लाल, ते तो  
 नरि पलटायरे ॥ सा० ॥ ज्ञेयनी नवनव

करवामा शुद्ध साधनाए निज प्रभुता के० निज शक्तिमा एकत्वपणे थिरे उपयोगे प्रवर्त्ते तेने पोताना केवलज्ञान केवलदर्शन अने केवल चरणरमण क्षायकभावे थाय परभावशी परिणाम पाछो वाली एटले प्रत्याहार करी शुद्ध ध्येयमा धैर्यपणे धारणा राखे, धीर्य अचल राखी अटोल रहे तो तत्त्वानदा जीव पूर्ण समाधिमा लयलीन थाय एटले विकल्पे व्यापेलो उपयोग शुद्ध अचल निज रूपमा लय पामी परम अचल समाधिभय रहे ॥ ६ ॥

अव्यावाध स्वगुणानी पूरण रीत जो, कर्त्ता भोक्ता भावे रमणपणे धरेरे लोल ॥ सहज अकृत्रिम निर्मल ज्ञानानदजो, देवचद्र एक त्वे सेवनथी वरेरे लोल ॥ ज० ॥ ७ ॥

अर्थ.—अनता गुणो अव्यावाधपणे राखवानी एज पूर्ण रीत छे के स्वगुण कर्त्ता भोक्तापणामां पोताना परिणामनु रमण अखंड समय एकत्वपणे धारे—राखे एटले देवमा चद्रमा नमान नमिश्वर स्वामीनी सेवामा परिणाम एकत्वपणे राखवाधीज सहज स्वभाविक निर्मल अनुपचरित ज्ञानानद पामीए ॥ ७ ॥

॥ समाप्त ॥

॥ अथ सप्तदशम श्री अनीलजिन स्तवन ॥

॥ देखो गति दैवनीरे ॥ ए देशी ॥

स्वारथ विष्णु उपगारत रे, अद्भुत अ  
निशय रिद्धि ॥ आत्म स्वरूप प्रकाशता रे,  
पूरण सहज समृद्धि ॥ अनील जिन सेवोपरे  
नाथ तुमारी जोडि न को त्रिहु लोकमेरे,  
प्रभुजी परम आधार अछो भवि थोकनेरे ॥३॥

अर्थ - हे अनीलनाथ स्वामी ! सत्तरमा तीर्थ  
पति तमे पोतानो स्वार्थ तो सिद्ध करयो छे ह्वे  
हमाराथी तमार काई पण स्वार्थ नर्था ते छतां पण  
तमे तमारा सरखा भव्य जीवों उपर परोपकार करो छा  
वली अद्भुत अतिशयवत छो एटले तमारा अपा  
यापगमन अनिशय बडे तमारा पाप दुरित दुःख  
नाश थाय छे वली तमारा वचन अतिशय बडे हमे  
हमारी भाषामा तमारा वचन सहजे समजीए  
छिये वली तमारा परम ज्ञानातिशय पसाये-हमोने  
अनास्पथी भिन्न शुद्धात्म स्वरूपनु ज्ञान थाप छे  
वली तमारा पूजातिशय पसाये हमे हमारा पूज्य

परमपदने पामीए एवी तमारी अतिशयादिक तथा  
 अष्ट महा प्रातिहार्यादि तथा अतरग केवलज्ञान  
 दर्शनादिकनी भाव लक्ष्मी छे वली तमे शुद्धात्म  
 स्वरूपना प्रकाश करवावाला पूर्ण सहज समृद्धि-  
 घत छो माटे हमे अनील प्रभु तमोने सेवीए तमे  
 हमोने ससार दुःखधी छोडाववावाला हमारा नाथ  
 छो त्रिलोकमा त्रय काले तमारी जोडीनो कोई  
 अन्य हेतू के० उपगारी नथी तेथी प्रभुजी तमे थोक  
 बध भवि जीवोने परम आधार छो ॥ १ ॥

परकारज करता नहिरे, सेव्या पार न हेत  
 जे सेवे तनमय थईरे, ते लहे शिव सकेत आ. १२।

अर्थ.- प्रभुजी तमे पर जीव तथा पर पुद्गल,  
 कार्यना कर्ता नथी अने तमने सेवनार भविने निश्-  
 चयधी तमे पालवावाला के राखवावाला के, पार  
 पमाडवावाला नथी पण तमने जे तन्मय थई सेवे  
 छे तेने तमे जाणे समस्या बध सलाहबध शिव  
 थापो एम जणाय छे पण तेनी सेवानु तेज पुरुष  
 शिवसुख फल पामे छे एमा काई शका नथी ॥२॥

करता निज गुण वृत्तितारे, गुण परिणति

उपभोग ॥ निप्रयास गुण वर्त्तताते, नित्य  
सकल उपयोग ॥ अनील० ॥ ३ ॥

अर्थ - प्रभुर्जा तमे तो सकल समय विना प्र  
यासे निज गुण प्रवृत्तिना फर्ता छ। अथ तमारे स्व  
गुण परिणतिनोज सकल समय उपभोग छे, नि.प्र  
यामे सहजे गुण वत्त छे अने तेनो उपयोग पण  
तमार सकता समय अत्यद छे ॥ ३ ॥

सेव भक्ति भोगी नहीरे, न करे परने।  
सहाय ॥ तुज गुण रगी भक्तनार, सहजे का-  
रज थाय ॥ अनील० ॥ ४ ॥

अर्थ - तमार, आज्ञा सेवयाचोता तमारी सेवा  
भक्ति कर तेना तम भोगी नथी अने तमे परनी  
सहाय करवावाला पण नथी पण ताहरा ज्ञानादिक  
गुणोमा रगी थई तमारी आज्ञा सेवे ते भक्तोना  
सहजे कर्ष थाय ॥ ४ ॥

किरिया कारण कार्यतारे, एक समय  
स्वाधीन ॥ वर्त्ते प्रति गुण सर्वदारे, तसु अनु-  
भव लयलीन ॥ अनील० ॥ ५ ॥

अर्थ.—तमारे अनेक गुणोना कार्यनी क्रिया कारण अने कार्यपणु प्रति गुणोनुं दरेक समयमां सम काले तमारे पोताने स्याधीन छे ते अनुभव रस स्वाद ॥ तमे लयलीन छो ॥ ५ ॥

ज्ञायक लोकालोकनारे, अनील प्रभु  
जिनराय ॥ नित्यानद मयी सदारे, देवचंद्र  
सुखदाय ॥ अनील० ॥ ६ ॥

अर्थ:—देवचंद्र मुनि कहे छे के अनील प्रभु, अगीधारमा धारमा अने तेरमा गुणठाणाना सामान्य जिनोमा राजा अने लोक अलाकना सकल रूपी अरूपी द्रव्य गुण पर्यायना उत्पादू व्यय ध्रुव त्रिकाल प्रवर्त्तीना ज्ञाता-द्रष्टा नित्य अखंड पूर्ण स्वतंत्र अनंत आनदमयी तथा सकल जीवोने सुखना दातार छो ॥ ६ ॥ ॥ समाप्त ॥

॥ अथ अष्टादशम श्री जशोधर जिनराजनुं  
स्तवन ॥

॥ राग मारु ॥ ए देशी ॥

वदन पर वारिहो जशोधर वदन पर वा-



रिहो ॥ मोह रहित मोहन जयाको उपशम  
रस क्यारि हो ॥ अहो उपशम रस क्यारिहो  
॥ व० ॥ १ ॥

अर्थ—हे जशोधर स्वामी ! शरद पूनमना  
चंद्रमा समान तमारा चदन कमलनी बलिहारी  
जाउ—चारी जाउ माहनु जया माताने ध्यानद  
आपनारा मोहन जीतेला भवि जीवोना हृदय कम  
लमा उपशम रस सींचवावाला पोते उपशमरस-  
ना क्यारा छो ॥ १ ॥

मोह जीव लोहको कचन, करवे पारस  
भारि हो ॥ समकित सुरतरु उपवन सिंचन,  
वर पुष्कर जलधारि हो ॥ अहो० ॥ वा० ॥ २ ॥

अर्थ—माहारा सरखा मोही जीव लोह सर-  
खाने कचन करवा माटे तमे परम पारस छो एटले  
अज्ञान मिथ्यात्व क्लेश रूप कीट मटावी आत्म  
शुद्धता रूप सुवर्ण करवावाला छो, समकित रूप  
कल्पवृक्षनी यागने सींचवा प्रधान पुष्कलावर्त मेघ-  
नी घारा समान छो एटले तमारा चदन क

शुद्ध तरवामृत अखण्ड धाराए वरने छे ॥ २ ॥

सर्व प्रदेश प्रगट मम गुणथी, प्रवृत्ति अनत अपहारी हो ॥ परम गुणी सेवनते सेवक, अप्रशस्तता वारी हो ॥ अहो० ॥ व० ।३।

अर्थ - प्रभुजीने सकल प्रदेशे अनता गुणो शुद्ध अने अनत पर्यायो पूर्ण प्रगट थया नेथी विभाव प्रवृत्ति अनती नाश करी एहवा परम गुणीनी आज्ञा सेववावाला सेवके सकल अप्रशस्तता निवारी छे एहले प्रभुनी सेवा करनार भवि जीवनी आत्म विरुद्धता अनती टली ॥ ३ ॥

पर परिणति रूची रमण ग्रहणता, दोष अनादि निवारीहो । देवचंद्र प्रभु सेवने ध्याने आत्म शक्ति तसारी हो ॥ अहो० ॥ व० ।४।

अर्थ.-ए प्रभुनी सेवार्थी पुद्गल परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहणतानी देव रूप अनादिनो दोष निवारी निज शुद्ध परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहण करयु देवचंद्र मुनि कहे छे जे जीवे प्रभु आणा सेवबामा अखण्ड ध्यान राख्युं तेणे पोतानी

शुद्धात्म परम शक्ति सभाली लीधी ॥ ४ ॥

॥ सपूर्ण ॥

॥ अथ एकोनविंशतिम कृतार्थ जिन स्तवन ॥

॥ अधिका ताहरो हु अपराधि ॥ ए देशी ॥

सेवा सारज्यो जिनजी मन साचे, पण  
मत मागो भाई ॥ महेनतनो फल मांगी ले-  
ता, दास भाव सधि जाई ॥ से० ॥ १ ॥

अर्थ - हे जिनराज ! साचे मने सेवानु सार  
फल आपजो पण हे भाई ! सेवानु फल मागशो  
नहि कोई काईनी सेवा करी तेनी महेनतनु फल  
मागो तो तेनी सेवानो कामी नथी पण तेना दाम  
रूप फलनो कामी छे जो दाम रूप फलनो कामी छे  
तो तेमां प्रभुनु दामपणु शु ! पोताना दाम रूप  
फलनु दासपणु करयु एटले स्वामीनु दासपणु न  
रह्युं माटे कामना रहित सेवा करघी ॥ १ ॥

भक्ति नहि ते तो भाडायत, जे सेवा फ-  
ल जाचे ॥ दास तिके जे घन भरि निरखी,  
क्षेकीईनी परे माचे ॥ सेवा० ॥ २ ॥

अर्थ:-जे सेवाना फलने ईच्छी सेवा करे ते भक्तिवत नथी पण भाडायत छे. दास तेनेज कहीए जे सदा स्वामीना हित समुदायमां राजी रहे-वर्त्त, स्वामीने गुण थाय एम जूए वली स्वामीनी ईच्छाए वर्त्त जेम केकई राणी पोताना दशरथ स्वामीनी भक्तिमां अत्यत रची मची रहेती हती तेम फल-कामना रहित प्रभुनी आजाए वर्त्त ते साचो सेवक जाणवो ॥ २ ॥

सारी विधि सेवा सारंतां, आण न कांड  
भाजे ॥ हुकम हाजर खिजमति करतां, सह-  
जे नाथ निवाजे ॥ सेवा० ॥ ३ ॥

अर्थ:-सरूलप्रकारे रूटी विधिए आणा सेवीए अने काई पण आणा विराधीए नहीं वली प्रभुना हुकममा हाजर रही खीजमत करीए तो सहजे स्वामीनी मेहेरयानी फले ॥ ३ ॥

साहिव जाणो छो सहु वाते, शु कहीए  
तुम आगे ॥ साहिव सनमुख अमे मागणनि  
वात फारमी लागे ॥ से० ॥ ४ ॥

अर्थ:-साहिब पोते केवलज्ञाने करीने सर्वे जाणो  
 छो के जे मेकामा हाजर छे ते परमानंदना कामी  
 छे तो हसे तुम आगे शु कहीए ? पण साहेब  
 सन्मुख हमे मागण काई मागचा रूप बात करीए  
 तो ते बात असोहासणी लागे माटे जाणीए द्विये  
 के जे प्रभुनी अखड आणा सेवदो ते अखड अवि  
 स्थ फल पामदो ॥ ४ ॥

स्वामि कृतारथ तो पण तुमथी, आश  
 स्तुको गखे ॥ नाथ विना सेनकनी चिंता,  
 कौण करे विणु दाखे ॥ सेवा ० ॥ ५ ॥

अर्थ - शुभ क्रियानो स्वामी ते शुभ फल पामे  
 अने शुद्ध स्वभाव प्रयत्नानो स्वामी शुद्धात्म संपदा  
 पामे ए निश्चय छे पण प्रभुजी जेवा परम दयालनी  
 आशा तो सर्वे राखे. माहरा जेवा रक पुरुषोने  
 मोक्ष मार्गमा प्रेरवाचाला नाथ विना हमारी चिंता  
 कोण मिटाये ? एटले हमारू चिंतित देखाड्या विना  
 कोण हमारी चिंता करे ? चली हमारू चिंतित  
 प्रभुजी तमे जाणोज छो पण बालकनी पेटे महारेथी  
 बोल्या विना न रहेवाय तेथी कट्ट छु ॥ ५ ॥

तुज सेवा फल माग्यो देतां, देवयणो  
थाये काचो ॥ विण माग्यां वञ्चित फल आपे  
तिणे देवचंद्र पद साचो ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थ:-जेणे तमने सेव्या तेनु फल तमे तेने  
माग्यु, आपो तो तमे सेवना अर्थी अधवा रागो  
कहेवाउ तेथी तमारू देवपण काचु गणाय पण  
माग्या घिना वञ्चित फल आपो छे तेथी तमारू  
देवमां चंद्रमा समान परम देवपद साचुज छे ॥६॥

॥ सपूर्ण ॥

॥ अथ विशतिम श्री धर्मश्वर जिन स्तवन ॥  
अस्वीया हरस्वन लागी हमारी अस्वीया ॥ ए देशी ॥  
राग प्रभाती ॥

हु तो प्रभु वारि छु तुम मुखनी, हु तो  
जिन बलिहारी तुम मुखनी ॥ समता अमृत-  
मय सुप्रसन्ननी, तरेय नही राग रुखनी ॥  
हु० ॥ १ ॥

अर्थ:-हे जिनेश्वर ! तमारा मुखनी हुं वारों

જાત્ર-ચલિતારી જાત્ર છૂ નટલે છે જિનેશ્વર ! તમારા  
 મુલ્ક કમલની જે વાણી ઘરસે છે તે સફલ જીવોના  
 પાપ મેલને ધોવાચાલી છે જીવો સ્વપર દ્રવ્ય અને  
 ભાવ પ્રાણની હાણી કરી વ્યવહાર અને નિશ્ચયથી  
 સ્વપર સુત્પની હાણી કરે છે પણ પ્રભુજી માહણતાનો  
 ઉપદેશ કરી મરુલ જીવના દ્રવ્ય ભાવ પ્રાણની હાણી  
 ધતી અટકાવે છે તે દ્રવ્ય પ્રાણ-ઈન્દ્રિયો (૫) ઘલ  
 (૩) શ્વાસોશ્વાસ (૧) આયુષ્ય (૧) એમ મૂલ ચાર  
 છે અને તેના ઉત્તર ભેદ દશ છે અને ભાવ પ્રાણ જ્ઞાન  
 દર્શન ધરણ અને ધીર્ય એ મુખ્ય ચાર છે તેના ઉપર  
 ભેદ ઐક્ય અથવા અનત પણ છે દ્રવ્યપ્રાણે કરીને  
 જીવ વ્યવહારિક સુખ ભોગવે છે અને તે દ્રવ્યપ્રાણ  
 ની હાણી કરવાથી છે પ્રકારનુ દુઃખ ધાય છે જેમ  
 સ્પર્શ ઈન્દ્રિયની હાણી કરવાથી તે સ્પર્શ ઈન્દ્રિયનુ  
 છેદન ભેદન ધાય તેનુ દુઃખ ઉપજે છે અને સ્પર્શ  
 ઈન્દ્રિય ઘટે જે જે સુખ લેતો ભોગવતો હોય તે સુખ  
 જાય તેનુ દુઃખ પણ જીવ ભોગવે છે તેમજ રસના  
 ઈન્દ્રિયને છેદવાથી તે છેદન ભેદનનુ દુઃખ ઉપજે છે  
 અને રસનાળ કરીને વિવિધ પ્રકારના સ્વાદ લેતો  
 હોય તે જાય તેનુ દુઃખ ઉપજે છે એમજ પાંચે

ईन्द्रियोमां पण जाणवु वली कायपलनो नाश कर-  
 वाधी दुःख उपजे छे अने कायपल बढे जे सुख लेतो,  
 होय ते जाय तेनुं दुःख थाय छे एम वधनबलमां  
 अने मनबलमां पण जाणवु वली श्वासोश्वासनी  
 हाणी करवाधी श्वासोश्वास रोक्यानु दुःख उपजे  
 छे अने श्वासोश्वास बढे जे सुख लेतो हतो ते सुख  
 जाय तेनुं दुःख थाय छे अने आयुष्यनी हाणी  
 करवाधी आयुष्य हाणीनु दुःख उपजे छे अने  
 आयुष्य बढे जे सुख लेतो हतां ते सुख जाय तेनुं  
 दुःख उत्पन्न थाय छे एम ए दशे द्रव्य प्राणनी हाणी  
 धी वेदना, भय, शोक, कषायादि दुःख उपजे छे  
 अने अवेदना निर्भय अशोक अकषायनुं सुख नाश  
 थाय ते दुःख उपजे छे वली ए द्रव्यप्राणनी हाणी  
 करता जीव एरु एरुथी चैर विरोध घांघी, चैर वि-  
 रोधनी परंपरा बधारी प्राये अनतकाल सुधी दुखी  
 थाय छे वली ए द्रव्यप्राणनी हाणी ते स्वपर भाव-  
 प्राणनी हाणीनु कारण पण थाय छे तेथी ज्ञान-  
 चरणादिक, आठे कर्म पोते वाधी, अने बीजाने पण  
 कर्मबधना कारण धई अनत काल संसारमां खुले  
 खुलावे छे हवे भावप्राणमां अज्ञान आदरी अज्ञान



पण विभाव सन्मुख जयावाली नथी ॥ १ ॥

भ्रमर अधर सिस धनु हर कमल दल,  
कीर हीर पुन्यम शशीनी ॥ शोभा तुछ प्रभु  
देखत याकी, कायर हाथे जिम असिनी  
॥ हुं० ॥ २ ॥

अर्थ.-प्रभुना भ्रमर आदिकनी शोभा देखतां  
कमल दल कीर हीर पुन्यम शशी आदिकनी सर्वे  
शोभा ते तुच्छ देखाय छे उपमेय आगल जे जे  
उपमा कही ते सर्वे कायर हाथे तरवार सरखी  
जाणवी एटले प्रभुना रूपने अन्य उपमा सभवेज  
नहीं भाटे अनुपम रूप छे ॥ २ ॥

मन मोहन तुम सनमुख निरखत, आख  
न तृपति अन्हची ॥ मोह तिमिर रवि हरख  
चंद्र छवी, मुरत ए उपससची ॥ हुं० ॥ ३ ॥

अर्थ.-हे मनने प्रमोद आपवावाला ! तमारा  
सन्मुख जोता हमारी आख तृप्ती पामती नथी  
एटले वेगली एसवा चाहाती नथी चर्चि प्रभुनी

श्री मोहतिमिरने हरवा सूर्य समान अने हरख  
पंजावधाने पूनमेना चंद्रमा सरखी उपशम रसे  
री उपशमरस वरसावती आनंद आपनारी छे ॥३॥

मननी चिता मटी प्रभु ध्यावत, मुख  
देखता तुम जिनजी ॥ इन्द्रि तृपा गई जिन-  
श्वर सेवतां, गुण गाता वचननी ॥ हुं ॥४॥

अर्थः-प्रभुनी निर्मल ज्ञानदिक् गुण ध्याता  
अने प्रभु मुखया शुद्ध नय स्यादाद अमृत मय  
वचन सभिली प्रभु रूप देखता हमारूप रूप मिद  
ममान जोणी मननी चिता मटी गई, जिनवर  
सेवता अने उचने करी प्रभु गुण गाता इन्द्रिय  
विषयोनी तृष्णा समी गई ॥ ४ ॥

मीन चकोर मोर मतगज, जल जगी वन  
नाचनथी ॥ तिम मो प्रति माहिय सुगतथी,  
ओर न चाहु मनथी ॥ हुं ॥ ५ ॥

अर्थः-मत्स्य जेम पाणी था, चकोरपंगी चंद्रमा  
देसीने, मोर फेप देगीने अने जगी तलाव थादि  
नीरवाली उटाण जग्यार्थी जेम मग्नरहे छे तम भने

साहेबनी सूरत देखी परम आहल्लाद उपजे छे  
तेथी प्रभुनी प्रभुना शिवाय हु अन्य पदार्थो कुदेव  
कुचरनादि चाहातो नथी ॥ ५ ॥

ज्ञानानंदन जाया नंदन, आस दास नैय-  
तनी ॥ देवचंद्र सेवनमें अहनिश, रमज्यो  
परिणति चित्तनी ॥ हु० ॥ ६ ॥

अर्थ - हे ज्ञानानंद दातार । जाया माताना  
नंदन, जाया माताने आनंद आपनार, दासनी  
निश्चय शुद्ध स्वरूपनी आशा पुरो देवचंद्र मुनि  
कहे छे के हमारा चित्तनी परिणति प्रभु आज्ञा  
सेरामा अह निश रमज्यो ॥ ६ ॥ ॥ सपूर्ण ॥

। अथ एकविंशतिम श्री शुद्धमती जिन स्तवन ।  
श्री जिन प्रतिमा हो जिन सरखी कही ॥ ७ देशी ॥

श्री शुद्ध मति हो जिनवर पूरवो, एह  
मनोरथ माल ॥ सेवक जाणी हो महेरवानी  
करी, भव सकटथी टाल ॥ श्री० ॥ १ ॥

अर्थ - श्री शुद्धमती जिनेश्वर हमारी मनोरथ  
माला पूरी करो मने तमारो सेवक जाणी महेर-

वानी करी भव सकटधी उगारो ॥ १ ॥

पतित उद्धारण हो तारण वच्छेदु, करे  
अपणायत एह ॥ नित्य निरागी हो निस्पृह  
ज्ञाननी, शुद्ध अवस्था देह ॥ श्री० ॥ २ ॥

अर्थ:-जने ताह्रा वचननी सम्यक् प्रकारे रुचि  
पतित छे तेने तु ससार ससुद्रधी उद्धारवावालो  
अने वात्सल्यता राखी तारवावालो छु तो हमने  
पोताना जाणी अपणायत कर. प्रभु तु नित्य निरागी  
पर जन परवस्तुनी स्पृहा रहित ज्ञानमय शुद्ध  
अवस्थावत छु अने ताहरो शुद्ध जायक देह छे। २।

परमानदि हो तुं परमात्मा, अविनाशी  
तुज रीत ॥ ए गुण जाणी हो तुम वाणी  
थकी, ठहराणी मुज प्रीत ॥ श्री० ॥ ३ ॥

अर्थ -प्रभु उत्कृष्ट ध्यानदवत परमात्मा छो.  
आत्मा तो जीव मात्र कहेवाय छे पण ते पोते  
पोताना परमभाव भोगी नथी पण प्रभु अखंड  
समय परम स्वतंत्र भाव भोगी माटे परमात्मा छो  
तमे जे स्वभाव आणद लेवानी रीत ग्रही ते ताहरी

रीत अविनाशी छे, प-गुण तमारी जाणीधी ते  
 जाणी अन्यधी प्रीत, तोडी तुमधी प्रीत जोडी छे।  
 शुद्ध स्वरूपी हे ज्ञानानदनी, अव्याबाध  
 स्वरूप ॥ भवजल निधि हो तारक जिनेश्वर,  
 परम महोदय भूप ॥ श्री० ॥ ४ ॥

अर्थ-प्रभु स्वद्रव्य क्षेत्र काल अने भावे पूर्ण  
 शुद्ध स्वरूपी ज्ञानानदमय ज्ञानानदी छो, सकल  
 समय अव्याबाधमयी छो, हे जिनेश्वर ! तमे भव-  
 दरियेधी अव्यने तारवावाला छो अने पूर्ण सिद्धि  
 पद रूप परम महोदय पदवीना राजा छो ॥ ४ ॥

। निरमम निसर्गी हो निरभय अविकारता  
 निरमल सहज समृद्धि ॥ अष्ट करम हो वन  
 दाहयी, प्रगटी अन्वय सिद्धि ॥ ५ ॥

। अर्थ -तमारे कोई परद्रव्य गुणपर्यायनु भमत्व  
 नथी तेम तेनो भग पण नथी तेथी भय अने कोई  
 प्रकारनो विकार पण नथी अने तमारे ससाम्य  
 राज सिद्धि अनती सहज स्वतंत्र निर्मल छे अष्टकर्म  
 रूप वन ध्यानाग्नि घमी प्रजात्यु तेथी तमारे ज्ञानादि

अखूट निर्मल" रिद्धि प्रगट थई छै ते अनंत  
कालसुधी खरच्यां पण खूटे नहि ॥-५ ॥

आज अनादिनी हो अनंत अक्षता, अक्षर  
अनक्षर रूप ॥ अचल अकल हो अमल  
अगमनु, चिदानंद चिद्रूप ॥ श्री० ॥ ५ ॥

अर्थ:-प्रभुजी आज तमारे अनादिनी सत्तागते  
अक्षयपणे रहली अनंत रिद्धि अने शक्ति व्यक्त थई  
छै ते अक्षर अने अनक्षर रूप के० वचन अक्षरपणे  
अनंती कही शकाय एवी अक्षर रिद्धि अने तेथी  
अनंत गुणी वचन आलापमां न आवे एवी अनक्षर  
रिद्धि स्वतंत्र प्रगट थई छै तेथी तमे अचल तथा  
अगम के० उद्दमस्थ जीवोने तमारा स्वरूपनी  
छद्दमस्थजाने पूर्ण गम न पडे तथा छद्दमस्थ मतिए  
करी तमारु रूप रिद्धि अने आनंद कली शकाय  
नहि तथा तमारु रूप रिद्धि पुद्दगलीक अन्यपदार्थी भेगु  
मली जाय नही तेथी तमे अमल एवा ज्ञानानंदमय  
ज्ञान रूप छो ॥ ६ ॥

अनंत ज्ञानी हो अनंत दर्शनी, अनंकारी  
अविरूद्ध ॥ लोकालोक हो ज्ञायक सुहकरु,

अनाहारी स्वय बुद्ध ॥ श्री० ॥ ७ ॥

अर्थः--तमे अनत ज्ञानी अने अनत दर्शनयंत छो तथा आकार रहित एपर जीवधी अविरुद्ध लोकालोकना ज्ञाता द्रष्टा सकल जीवोनी सुखना कारण छो तमारे कई पण आहारनी जरूर रहेंती नहीं तेधी अनाहारी छी पोते पोताधीज बोध पामेला माटे स्वयबुद्ध छो ॥ ७ ॥

जे निज पासे हो ते शु मागीए, देवचंद्र जिनराय ॥ तो पण मुजने हो शिवपुर साधतां, हो जो सदा सुसहाय ॥ श्री० ॥ ८ ॥

अर्थः--जानानदादि अनत कायोनी सत्ता हमारी हमारा पासेज छे तो प्रभुजी पासे शु मागीए ? पण देवोमां चंद्रमा समान हे जिनराज ! हमने मोक्षमार्ग साधता सदाए तमे सुसहाय थजो ॥८॥

॥ सपूर्ण ॥

॥ अथ द्वाविंशतिम श्री शिवकर जिन स्तवन ॥

शिवकर जिनवर देव, सेव मनमा रमे हो  
छाल सेव मनमां रमे ॥ तन्मयताए ध्याय,

तेह भव भय वमे हो लाल तेह० ॥  
 त्रिपदी प्ररूपी सार, जगत जन तारवा हो-  
 लाल जगत० ॥ द्रव्य अनंत प्रजाय, प्रमेय  
 विचारवा हो लाल प्रमेय० ॥ १ ॥

अर्थः—सकल अशिव दूर करी सर्वे प्रकारे शिव  
 करवावाला एहवा शिवकर नामे गत चोविशीमां  
 पाविशमा तीर्थपति केवलज्ञान दर्शनादि गुणे देदि  
 प्यमान देवनी आणानुं सेववु ते माहरा मनमा रमे  
 छे अथवा भविजीवोना मनमा रमो के जेमी आणा  
 सेववाधी आत्मा शिवपद पामेछे यण ए प्रभुनी  
 सेवा तन्मयताए ध्यायके० प्रभुजी जेम राग द्वेष  
 छोडी शुद्ध धिर सम परिणामे ज्ञान दर्शन चरणादि  
 आत्मगुणोना रम्या तेज प्रमाणे भविजीव पण राग  
 द्वेष छोडी सम परिणामी धई मुख्य दर्शन ज्ञान  
 चरणमय आत्म स्वभावमा धिर योगे रमे तो सकल  
 भवभय वमे एटले भव करवानो भय तेने रहे  
 नहि अने निर्वाणपद पामे करुणा भंडार जिनेश्वरे  
 जगत् जीवोने तारवा माटे प्रथम सार त्रिपदी  
 प्ररूपी अने सर्वे तीर्थकरो अनादिधी प्रथम त्रिपदीज



प्ररूपे छे के जेधी भबि जीव आत्म अनात्म स्वरूप  
 भिन्न जाणी पोतानो उपयोग आत्म शुद्धतामा धिर  
 करी शके छे ज्यासुधी शुद्धात्म स्वरूपनु ज्ञान न  
 होम त्यासुधी पुद्गलादि परद्रव्यनी ममता अने  
 मिध्यात्व अधिरति आदि कर्मबधना पारणो शकी  
 रही आठे प्रकारे कर्मबध थया करे छे पण ज्यार  
 भिन्न भिन्न द्रव्यनी उत्पाद व्यय अने ध्रुवतारूप  
 परिणति भिन्न भिन्न ज्ञाने स्यारे परद्रव्य उपर  
 ममता शक्ती रहे अने परद्रव्यमा आपणु कार्य केम  
 मताय अने परद्रव्यमा आपणु कार्य मताय नहि  
 स्यारे राग द्वेष अने शुभाशुभ सकल्पा पण उपजे  
 नहि एटले जीव शुक्लघ्यान पामी प्रथम घाती  
 कर्मनो नाश करी आगर सिद्धि पामे त्रिपदी एटले  
 पचास्ति द्रव्य सकल समय आप आपणा पूर्व  
 पर्यायनो व्यय, नीतन पर्यायना उत्पाद अने सत्तानु  
 ध्रुव रागव्यु करे छे एटले नच नवे समय नचि नचि  
 परिणति करे छे अने मूल गुणो ध्रुव रहे छे कोई  
 द्रव्य कोई अन्य द्रव्यना पूर्व पर्यायनो व्यय, नीतन  
 पर्यायनो उत्पाद अने तेनी सत्तानु ध्रुव रागव्यु करी  
 शक्ती नथा तेधी सर्व द्रव्यनी सामान्य विशेष

शक्ति साक्षात्कार भिन्न जणाय छे त्यारै भवि जीवने ममता टली जाय छे अने ममता विना राग द्वेष रहेता नथी एटले सुखे संजम साधी सिद्धि पामे छे. द्रव्य विषे भगवंते कह्यु “उपनेवा, विगमेवा, ध्रुवेवा” एटला उपरथी गणधरो एक मूर्च्छमां द्वादशांगनी रचना करे छे अने द्वादश अंगवट्टे जगत्मां पोधनो विस्तार कराय छे आपणे पण वस्तुनी त्रिपदी सभालीए ते परद्रव्यनु ममत्व टली उपयोग आत्म शुद्धतामा थिर थाय छे माटे त्रिपदीनो अर्थ विचारो परद्रव्यथी भिन्न आत्म शुद्धता जाणी आत्म शुद्धताना कामी धई सिद्धि सुख साधवु प्रभुजीए तीर्थकर नाम-कर्मना उदयवट्टे भवि जीवने तारवा त्रिपदी प्ररूपी तो आपणे तेमनां परम उपकार सन्मानो तेमनी आणा समय मात्र पण न चूकता सेववी त्रिपदीनो पूर्ण भावार्थ तो केवली पोताना केवलज्ञानमां जाणे छे अने आदेश घशे-श्रुतज्ञानी पण पूर्ण भावार्थ अर्द्धा गोचर जाणे छे अने द्रव्य थकी द्रष्टिवाद अ-गमा कल्या प्रमाणे अर्थ छे पण अहिंश्रां सक्षेपथी लखीए छिये के पचास्ति द्रव्यना प्रति प्रदेशे स्वस्व

कार्य करवाना करण रूपे अस्तित्पणे छति पर्याय  
 तीरोभावे ( गुप्तपणे ) अनता अनता, छे जेम जीव  
 द्रव्यना असग्याता प्रदेश ते ते दरेक प्रदेशे जाणवा  
 रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, देगवा रूप  
 कार्य करवाना छति पर्याय अनता, आचरण रमण  
 रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, धीर्य अचल  
 राखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता  
 तेम दान देवा रूप, लाभ लेवा रूप, भोग उपभोग  
 भोगववा रूप सुरा आनदादि अनत कार्य धर्मना  
 छति पर्यायो प्रति प्रदेशे अनता अनता अस्तित्पणे  
 छे ते छति पर्यायोमाधी समय पामोने अनता पर्यायो  
 स्वकार्य करवाने आविभावे उपजे अने प्रथम समय  
 जे पर्यायो आवीभावे आवेला होय ते आवीभावधी  
 विणसी तीरोभावे जाय अने तीरोभावे रहैला  
 पर्यायोमाधी केदना आवीभावे उपजी कार्य करे  
 उक्तच “ उत्पाद व्यय भुव युक्त सत् लक्षण द्रव्यं  
 एतले नवा पर्यायनु भवन अने पूर्य पर्यायना व्यय  
 धिना कोई पण कार्य धई शक्तु नधी उत्पाद व्यय  
 धई कार्यनु करवु एज द्रव्यनी सत्ता छे पण पर  
 पर्यायनु भवन व्यय कोई अन्य द्रव्य करी शक्तो

नधी एम जाण्या पछी आपणु कार्य पर द्रव्यमां  
भासे नहि तो पर द्रव्य ऊपर राग रोप पण रहे  
नहि ए उत्पादु व्यय खट गुणी हाणीवृद्धिपणे धाय  
छे ते बीजा अथोधी जाणी लेजो त्रिपदी बडेज  
अनत द्रव्यना अनत पर्यायना प्रमेयनो बोध धाय  
छे माटे परम उपकारी प्रभुजीण त्रिपदी प्ररूपी ए  
समान बीजो उपकार नधी ॥ १ ॥

जगमां द्रव्य अनंत, उतपती व्यय ध्रुव  
रहे हो लाल उत० ॥ जे जे जेहना ते तेहना  
तेह मांही लहे हो लाल तेह० ॥ जाणी भेदे  
विभाव, अनतने जे नरा हो लाल अनंत० ॥  
॥म पूर्णानंद, आतम सपति धरा हो लाल  
ज्ञानम० ॥ २ ॥

अर्थ -जगत्मां एक धर्मास्ति, एक अधर्मास्ति  
आकाश, अनंता जीव तथा अनंत पुद्गल ए  
प्रकारे अनत अस्ति द्रव्य छे अने काल ते  
स्तिनो वर्तना पर्याय रूप अनत द्रव्य उपचारधी  
धर्मास्ति कायादि पचे अस्ति द्रव्य सर्वे

कार्य करवाना करण रूपे अस्तिपणे छति पर्याय तीरोभावे ( गुप्तपणे ) अनता अनता, द्वे जेम जीव द्रव्यना असग्याता प्रदेश छे ते दरेक प्रदेशे जाणरा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, देववा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, आचरण रमण रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता, धीर्य अचन राखवा रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनता तेम दान देवा रूप, लाभ हेरा रूप, भोग उपभोग भोगववा रूप सुरा आनदादि अनत कार्य धर्मना छति पर्यायो प्रति प्रदेशे अनता अनता अस्तिपणे छे ते छति पर्यायोमाथी समय पामोने अनता पर्यायो स्वकार्य करवाने आविभावे उपजे अने प्रथम समय जे पर्यायो आवीभावे आवेला होय ते आवीभावाथी थिणसी तीरोभावे जाय अने तीरोभावे रहेला पर्यायोमाथी केदला आवीभावे उपजी कार्य करे. उक्तच “ उत्पाद व्यय ध्रुव युक्त सत् लक्षण द्रव्य एटले नवा पर्यायनु भवन अने पूर्य पर्यायना व्यय घिना कोई पण कार्य थई शक्तु नथी उत्पाद व्यय थई कार्यनु करवु एज द्रव्यनी सत्ता छे पण पर पर्यायनु भवन व्यय कोई अन्य द्रव्य करी शक्तो

नधी एम जाण्वा पछी थापणुं कार्य पर द्रव्यमां  
भासे नहि तो पर द्रव्य ऊपर राग रोष पण रहे  
नहि ए उत्पाद व्यय खट गुणी हाणीवृद्धिपणे थाय  
छे ते बीजा ग्रथोथी जाणी लेजो त्रिपदी बडेज  
अनत द्रव्यना अनत पर्यायना प्रमेयनो बांध थाय  
छे माटे परम उपकारी प्रभुजोण त्रिपदी प्ररूपी ए  
समान बीजो उपकार नधी ॥ १ ॥

जगमां द्रव्य अनंत, उतपती व्यय ध्रुव  
रहे हो लाल उत० ॥ जे जे जेहना ते तेहना  
तेह माही लहे हो 'लाल तेह० ॥ जाणी भेदे  
विभाव, अनतने जे नरा हो लाल अनंत० ॥  
पाम पूर्णानंद, आत्म सपति धरा हो लाल  
आत्म० ॥ २ ॥

अर्थ -जगत्मां एक धर्मास्ति, एक अधर्मास्ति  
एक आकाश, अनता जीव तथा अनंत पुद्गल ए  
पच प्रकारे अनत अस्ति द्रव्य छे अने काल ते  
पचास्तिनो वर्तना पर्याय रूप अनत द्रव्य उपधारधी  
छे अने धर्मास्ति कायादि पचे अस्ति द्रव्य सर्वे

सकल समय छे एम जे शुद्ध रीते नि शंकपणे जाणे  
 थने जे जेनी ते तेनामा माने तेने मिथ्यामति रहे  
 नहि अने परिणामधी मिथ्यात्व गया पछी सत्तामा  
 पण रहेला मिथ्यातना दलीला ते पण क्षय जाय  
 जगत्मा पचास्ति द्रव्य स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव  
 अस्तित्पणे शाश्वता छे तेमा पर द्रव्यादिक रूपे न  
 थयानो स्वभाव पण अस्तित्पणे छे तेने नास्ति स्व  
 भाव कहीए एटले स्वधर्म छता रहे पण परधर्म रूपे  
 याय नहि ए द्रव्यनु अस्तित्पणु ते प्रथम सामान्य  
 स्वभाव जाणवो ॥ ४ ॥

निज निज वस्तु स्वभाव, न छडे को कदा  
 हो लाल न छडे० ॥ दर्वे निज पर्याय, रुके  
 नहि को कदा हो लाल रुके० ॥ सहज प्रमेय  
 प्रमाण, सदा सहु परिणमे हो लाल सदा० ॥  
 अगुरुलघु परजाय, स्वकार्यमा सहु समे हो  
 लाल स्वकार्यमा० ॥ ५ ॥

अर्थ.- (२) सब द्रव्य आप आपणो वस्तु स्व  
 भाव कोई पण कदापी छोडे नहि ते वस्तुत्व कहीए

(३) द्रव्य माही जनक स्वभाव छे ते सकल समय छती पर्यायोने सामर्थ्यपणे उपजावे अने सामर्थ्य पर्यायने पोतामाज तोरोभावे दर्वे (सेनाव) एम छती अने सामर्थ्य वे भेदे पर्यायनी उत्पत्ति व्यय प्रवृत्ति कोई समय पण कोई रीते रोकाय नहि ते द्रव्यत्व स्वभाव कहीए

(४) द्रव्यना सर्वे स्वभावो सर्वे समय आप आपणा प्रमेय प्रमाणे परिणमे छे कोई द्रव्यनो एक स्वगुण ते बीजा स्वगुणनु कार्य घरे नहि अने पर द्रव्यना कोई गुणनु कार्य पण करे नहि ने स्वकार्य विना कोई समये खाली पण रहे नहि आप आपणी मर्यादा सूके नहि तेथीज सकल द्रव्य गुण पर्यायनु प्रमाण ज्ञान वडे करी शकाय छे ए प्रमेयत्व स्वभाव जाणवो

(५) गुणोना छती पर्यायो प्रदेशे प्रदेशे अनता अनता छे ते खट गुण हाणीवृद्धि पणे आचीर्भाव तोरोभावे सर्वे प्रदेशे सर्वे समय धया करे छे तेथी कोई द्रव्य हलको अगर भारे धाय नहि एहवो अगुरुलघुत्त्य स्वभाव जाणवो



विगमे पुरव प्रजाय, नऊतन उपजे हो  
 लाल नऊतन० ॥ पण ध्रुव शक्ति सदाय,  
 सत्त्व लक्षण भजे हो लाल सत्त्व० ॥ ए  
 सामान्य स्वभाव, ते जेहना तेहमा हो लाल  
 ते जेहना० ॥ बलि विशेष स्वभाव, ते जेहना  
 जेहमा हो लाल ते जेहना० ॥ ६ ॥

अर्थ.—(६) पूर्व पर्याय विणसता अने नवा  
 पर्याय उपजता द्रव्य आप आपण कार्य करता छतां  
 पण सत्त्वाने छोड़तो नही ते सत्त्व लक्षण छे यत  
 “ अर्थ किया कारित्वं द्रव्य ” जो द्रव्य सर्वे  
 समय आप आपण कार्य न करे तो सत्त्व लक्षण  
 वेम रहे !

एत सर्वे द्रव्यना छ मूल सामान्य स्वभाव  
 तथा उत्तर सामान्य स्वभाव तथा अत विशेष  
 स्वभाव जे जेना ते तेनामां जाणवा मानवा कोई  
 द्रव्यना सामान्य अथवा विशेष स्वभाव कोई अन्य  
 द्रव्यमा जाय आवे नहि एम जाणवाथी निर्विकल्प  
 बोध प्रगट थाय छे ॥ ६ ॥

लक्षण लक्ष्य अभेद, त्रिकालपणे रहे हो  
 लाल त्रिकाल० ॥ एम जाणी नर बुद्धने  
 ममता नवि रहे हो लाल ने ममता० ॥  
 आत्म ज्ञान विण ममत, ममतर्था मिथ्यात  
 छे हो लाल ममतर्था० ॥ एहथी अविरति  
 होय, प्रमाद कपाय छे हो लाल प्रमाद० ।७।

अर्थ:-लक्ष्य के० द्रव्य अने तेना अनत पर्याय  
 रूप लक्षणा ते द्रव्यथी त्रिकाले अभेदपणे होय  
 एम जे पडित जाणे तेने परद्रव्य गुण पर्यायनी  
 ममता रहे नहि एटले तेने परद्रव्यादिनी राग  
 न्यतीत थाय ज्यासुधी आत्म शुद्धतानु ज्ञान नथी  
 त्यासुधी परद्रव्यादिनी ममता रहे अने ममता होय  
 त्यासुधी मिथ्यात्व रहे अने तेथी अविरति प्रमाद  
 कपायादि दोषो उपजे ज्यारे आत्म शुद्धतानु ज्ञान  
 थाय त्यारे ममता अने मिथ्यात्व टले त्यार पछी  
 अविरति प्रमाद कपायादि सर्वे दोषो नाश पामे.  
 माटे आत्म सिद्धतानु मूल आत्म शुद्धतानु ज्ञान

हे ए विना एकाते साध्य शून्य त्रिषा विट्  
रूप हे ॥ ७ ॥

जोग चपलता करि निज, वीरज चल  
करे हो लालके वीरज० ॥ वधे आठे कर्म,  
गहन भव वन फरे हो लाल गहन० ॥ बाल  
बाधक थयु वीर्य, साधकता नवि लही हो  
लाल साधकता० ॥ शिवकर देव हृदयमा,  
करुणा लह लही हो लाल के करुणा० । ८ ।

अर्थ - अचिरति प्रमाद कपायादिके जोग चप  
लता थाय ते थाने जोग चपलता वशे आत्मवीर्य  
पण चलायमान थई ज्ञानावरणादि आठे कर्मनो  
उध करी जीव गहेश भव वनमां फरतो स्वतंत्रता  
विना असत्य दु ए भोगने हे उक्तच-भागवई अगे  
“ चलई फदई ” आत्म शुद्धतानु पूर्ण ज्ञान  
धयापछी जीवने परद्रव्यनी स्पृहा इच्छा कामना  
मनोरथ धतो नथी माटे अणे योग पूर्ण थिरता पामे  
हे आत्मवीर्य अचल थाय ते जे जे अशे आत्म-  
वीर्यनु चलपणु ते ते अशे कमेधध हे जे ।

आत्मवीर्यनु अचलपणु धयु ते ते अशे पूर्ण कर्मबध  
 विलय जाय अने नविन बध करे नहि, आत्मवीर्य-  
 नी पूर्ण स्थिरता बडे पूर्ण सिद्धि प्राप्त थाय माटे  
 शुद्धात्म ज्ञानमां लयलीन यवु एज अथ छे कोई  
 फहेशे के हु आत्मज्ञानी हु पण ते राग द्वेषमा  
 वर्त्ततो होय तो तेने पूर्ण आत्मज्ञानी जाणवो नहि  
 पण जे जे अशे राग गयो ते ते अशे आत्मशुद्धता  
 प्रगट थाय छे अने तेतलुज आत्मज्ञान जाणवु अने  
 ज्या आत्मशुद्धता पूर्ण प्रगट थई त्या रागनो अश  
 मात्र रहेतो नथी पूर्ण क्षायक वीतरागता प्रगट  
 थई णटले मोहनीय कर्मनो नाश थयो अने पारमा  
 गुणठाणाना वेल्हा वे समयमा ज्ञानावरण दर्शना-  
 वरण अने अंतरायनो नाश थाय छे अने चाकीना  
 चार आघाती कर्म रह्या ते स्थितिण नाश थाय छे  
 एम जीवने परमानन्द प्राप्त थाय छे माटे जाने घरी  
 आत्मशुद्धता बधारवी एज मोक्ष मार्ग छे आत्माना  
 ज्ञानु दर्शन चरणादि आत्माधी अभेटपणे रहेला  
 गुणाने निर्मल करथा ते आत्म शुद्धता कहीण अने  
 तेज मोक्षमार्ग छे. जे जे अशवी राग द्वेषनी उप्राधि  
 गई ते ते अशे ज्ञान दर्शने चरणरूप आत्मगुणाना

अशो प्रगट थया एम जाणतु आत्मज्ञान विना  
 परद्रव्यनी ममताए आत्मवीर्य घाल साधकभावने  
 पाम्यु करणवीर्यपणे प्रवत्सु साधकता जाणी नहि  
 थने साध्य जाणयो नहि साध्य जाणया विना शु  
 साधे ? साधकता जाण्या विना देवी रीते साधन  
 कर ? मात्र साध्य शून्य क्रिया करी शुभाशुभ  
 परिणामे भव भ्रमण कर, एम जाणी शिषकर देवना  
 हृदयमां करुणारस उभरायो तेथी भविजीवोन  
 तारवा अर्थे त्रिपदी प्ररूपा ॥ ८ ॥

शुद्ध अखडित धार, अमृत घन वरसता  
 हो लाल अमृत० ॥ प्रभुजी मेघ समान,  
 भव्य द्रग दरसता हो लाल भव्य० ॥ पूजो  
 श्री प्रभु अग, सुरगे ऊमही हो लाल सुरंगे०  
 ॥ दरशन ज्ञान चारित्र, सर्वीर्य मयी सही  
 हो लाल सर्वीर्य० ॥ ९ ॥

अर्थ -मेघरूप प्रभुजी शुद्ध स्यादुवाद्नी दश  
 नारूप यखट अमृतघन धारा वरसावता भवि  
 जीवोना अज्ञान मिथ्यात्व कपाघादि भवद्व ताप

समावता शुद्धात्म भावमा विरता करावता भवि  
 समकृतीनी द्रष्टिमा अमृत मेघ सरस्वा देखाय छे  
 प्रभुजोनु अग पूजो एटले ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि  
 अतत शुद्ध गुणमय प्रभुजीना अरूपी अगने परम  
 आदरे मनने सुरगे ए सम शुद्ध ध्येय जाणी आनंद  
 सहित पूजो तथा देशनानु कारण एहवा प्रभुजीना  
 औदारिक अंग-(१) चरणगुष्ट (२) जानु (३) कर  
 (४) भ्रुजाख्य (५) शिर (६) भाल स्थल (७) कठ  
 (८) हृदय (९) नाभि एम नवमूरय तथा ते मिवाय  
 नयण वदनादिक प्रभुना सर्वे अग सुगधी द्रव्ये  
 पूजवा लायक छे एम जाणवुं ए अगपडेज देश  
 विदेश फरी शुक्लध्यान करी केवलज्ञान उपजावी  
 आपणने शुद्ध साध्यनी देशना आपे छे माटे प्रभुना  
 सर्वे अग बट्ट सन्माने बहु विधे पूजवा ला-  
 यक छे ॥ ९ ॥

जाणे श्रीपदी शुद्ध ते ध्यान शुक्ल लहे  
 हो लाल ते० ॥ धाती करम क्षय जाय अनंत  
 चतुक लहे हो लाल अनंत० ॥ ए विण धर्म  
 न शुक्ल लहे नहि नर कदा हो लाल लहे०

ते माटे लहि त्रिपदी सुशिव साधो मुदा हो  
लाल सु० ॥ १० ॥

अर्थ -जे भवि शुद्ध रीते त्रिपदीना भाव जाणो  
तेज शुक्लध्यान पामे अने शुक्लध्याननो धीजो  
पायो ध्याता चारे घनघाती कर्मनो नाश करे अने  
अनंत चतुष्क पामे एम द्रव्यना उत्पाद व्यय ध्रुवा  
दि त्रिपदीना भाव जाण्याविना जाव धर्मध्यान  
अने शुक्लध्यान कदापी पामे नहि ते माटे  
सिद्धातमायी त्रिपदीना मुख्य भाव जाणी सदाए  
आनंद सहित कर्मधर्मी मृकाचा रूप गडो मोक्ष  
मार्ग साधवो ॥ १० ॥

अग पूजा करि एम, आणा आराधीए  
हो लाल आणा० ॥ लहि निज शुद्ध स्वरूप  
मोक्षमग साधीए हा लाल मोक्ष० ॥ महा-  
गोप महामाहण, शिव सव्यवाह छो हो लाल  
शिव० ॥ निर्यामिक महावैद्य, परम जग नाह  
छो हो लाल परम० ॥ ११ ॥

अर्थ - ऊपर प्रमाणे जिनेश्वरना दृष्टि अंग  
 विविध प्रकारे पूजा मन्मान करो आजा आगा  
 अने पोतानु शुद्धात्म स्वरूप जाणी पुन्यार्थ पराक्रम  
 करो धीर्य अचल गणी मोक्षमार्ग माया हे  
 प्रभुजी ! तमे भवि जीव रूपा गाथोन मन्मान  
 बोध रूप सजीवनी चारो चरायी आत्म ज्ञान  
 सचेत फरी निर्विघ्नपणे मुक्ति रूप नगरं पटा  
 छो माटे महागोप छो चली तमे पटा  
 जीवोने कोईपण जीव कोई प्रकारे हाणी वा  
 अने तेमना द्रव्य प्राण तथा भाव प्राण  
 करे गहवो माहणतानो उपदेश करो छो  
 आचार्यादि मारफते पण माहणताना  
 प्रेरणा कराओ छो माटे तमे पोतेज म  
 चली तमे उपद्रव रहित शिव स्थान के  
 माटे शिवमार्ग के० मार्गमां क्रोध मोहादि  
 काई हरफत करी शके नहि अने कुशु  
 जनो उन्मार्गमा पाही शके नहि एह  
 रहित मार्ग स्याद्वादमय शुद्धनये शुद्धात्म  
 जणावी निर्विघ्नपणे लई जाउ छो माटे मो  
 सार्थवाह छो चली तमे ज्या राग द्वेष



अज्ञान रूप त्वारु कडु कैरी जल भरेलु छे अने  
 कषायो रूप श्वापदोनु भारे जोर छे तथा ज्यो  
 अथाह विकल्पोना कल्लोली उधली रखा छे तथा  
 ज्यो काम घडधानल लागी रखो छे एहवा भव  
 दरियामा बृहेला जोचोने शुद्ध सजम जहाजमां  
 लई आत्म सत्ताथल आनदपुरी नगरीमां पहुँचाडो  
 छो माटे निर्णामरु छो वली जगवासी जीवोने  
 लागेला अज्ञान मिथ्यात्व अविरति आदि दु साध्य  
 रोगोने नाश करवा ज्ञान दर्शन चरण रमण मिश्रित  
 उदासिन्नता रूप मृगांरु पुडीनु सैचन करायी  
 उतावले ते रागोने मटायो छे माटे अमोघ परमवैद्य  
 छो वली अशरण अनाथ उन्मार्गे पडेला एहवा  
 जगवासी जोचोने सारण पारण चोषणा पटिचोषणा  
 करी करायी निर्भय सुग्न स्थानमा लावो छो माटे  
 तमे जगत्ना नाथ छा ॥ ११ ॥

चरण वदन कर नयण, परम जिनराजना

लाल महा० ॥ भवि जन पामे सिद्धि, तत्त्व  
निज शोधथी हो लाल तत्त्व० ॥ ११ ॥

अर्थ:- प्रभुजी तमारा परम चरणवडे देश विदेश  
विहार करी भविजीवोने सम्पकज्ञान धारित्र रूप  
फल आपो छो तेथी तमे जगम कल्पवृक्ष समान  
छो वली तमे तमारा चदन कमल पडे द्वादशांगना  
देशना आपी शुद्ध साध्य साधन यतावी उपकार  
करो छो वली तमारा परम कर कमले करी दिक्षा  
जिक्षा आपी उपकार करो छो वली तमारा परम  
नयण कमल वडे भवि जीवोउपर अमृतमय द्रष्टिण  
देखी भविजीवोनी द्रष्टि शुद्धात्म सन्मुख करावो  
छो एम तमारा सर्वे अंग अने सर्वे पुण्य अतिशय  
भविजीवोने परम उपकार परम समाधिना कारण  
छे वली तमारा अंतरंग आत्मिक गुणो अने अंगमा  
रहेला पुण्य अतिशयना गुणी आगल मणिमय  
मुकट कुडलादिकनी शोभानु तो एमे शु भस्वाण  
करीण ? मणि रत्न आदिना मुकट कुडलादि  
आभूषणो तो नसारी विषयी चक्रवर्ती ईद्रादि घणा  
पेहेरे छे तो एहवा अजीब अने अधिर पदार्थनी  
शो शोभा ? एटले तमारा अंतरंग अने धार्मि सर्व

उत्तम लक्षणो भविर्जीवोने आत्म सुख काजमां  
 पुष्ठ सहायकारी कारणो छे नाबनु महाविशाल  
 रूपालपणु शुद्ध बोधधी हमने जणाय छे पण जे  
 भाषि जीव नमारा परम शुद्ध बोधन अति मन्माने  
 आदरे अने तन्मय थई आत्म तस्वनी शुद्धता परे  
 ने सिद्धि पामे ॥ १२ ॥

पामे आत्म ज्ञान दोष दु रा सहु टले हो  
 लाल दोष० ॥ सांझे आत्म काज अचल  
 कमला मले हो लाल अचल० ॥ पूज्यनी  
 पूजा आपे शिवधर वासने हो लाल के शिव०  
 देवचद्र मुनि मनसुख सहज० विलासने हो  
 लाल के सहज० ॥ १३ ॥

अर्थ,-तमारी आज्ञा सेवी जे जीव आत्म रोष  
 पामे तेना सर्व दोषो अने दु ग्वो टले अने आत्म  
 कार्य सिद्धि थाय वली केवलज्ञानादि अक्षय अचल  
 लक्ष्मी मले एहया त्रिभुवन पूज्य शिवकर स्या  
 मिनी सेवा शिवधर वास थापवावाली छे देवमा  
 चद्रमा समान शिवकर स्यामी मुनिओना राजा न

मनमुख उर्मगे करी सेधतां सहज आत्मिकविलास  
पामे ॥ १३ ॥ ॥ संपूर्ण ॥



॥ अथ त्रयोविंशतिम श्री स्यंदन जिन स्तवन  
॥ शान्ति जिनेश्वर केसर अर्चित जग वणीरे आ०  
॥ ८ देगी ॥

स्यंदन जिनवर परम दयाल कृपालुओरे  
॥ जग सोहन भवि बोहन देव मयालुओरे  
॥ दे० ॥ ए आंकणी ॥ परपद ग्रहणे जनजन  
वाधे कर्मनेरे, अथिर पदारथ ध्यातां किम लहे  
धर्मनेरे कि० जुडचल जगनी एवं छे पुदगल  
परिणतिरे, ध्याता धीरज कपे आप लहे न  
सगुण रतीरे लहे० ॥ १ ॥

अर्थ.-गत चोविंशीना तचिशमा तीर्थकर श्री  
स्पदन जिनेश्वर परम दयाल अने परमकृपाल छे  
जगत्मां जे जे लोको शुद्धमार्गना अजाण दया अने  
कृपा करे छे ते दया थोडा दिनने माटे अने आस्वर  
आयु पर्यंत बोर्डकने घाह्य हितकारी पण थड शके

द्वे पण ध्याग्गरे ते दयानु हित विणसी जाय ते ठेम  
 के पुद्गलीक दया अधिर ते अने एकात्मिक सुखनु  
 कारण नथी चली ते पुद्गलीक सुग्ग भय भरेलु छे  
 अने स्वदन स्वामीनी दयाथी जे आत्मिक गुणो अने  
 आत्मिक स्वतन्त्र सुखप्रगट थाय ते तो सादिअनत-  
 कालसुग्गी निर्भय निराकुल अचल परम स्वतन्त्र  
 सुखनु कारण छे माटे प्रभु परम कृपाल छे प्रभुजी  
 अणो जगत्मां शोभा पामेला छे ने पानाल मनुष्य  
 अने स्वर्गोमां भुवनपतियो मनुष्यो न्यतरा विद्या-  
 धरो गणधरो मुनिव वैमानिका अन नरनारीउना  
 थोक जेना गुणोनी स्तवना शोभा हमेशा कर या  
 करे छे भविजीयोने शुद्ध बोधना दातार छे, केवल  
 ज्ञान केवलदर्शने करी देदिप्यदाने तेव सर्व जावोना  
 ऐदक्षा परम मयालु ते ममारी जीवो पुद्गल गुण  
 पर्यायरूप परपद ग्रहण करवायी गटले परिग्रह वशे  
 कर्म बाधे छे ते परिग्रह तो निश्चयथी परवस्तुने  
 अहपणे ग्रहवु ते एक अभेदपणे जाणरो अने  
 व्यवहारथी पाछ परिग्रह नयविधे तथा अतर परि-  
 ग्रह सोह विधे छे पुद्गलिक अधिर पदार्थने ध्याता  
 चित्त धिरता पामनु नथी अने चलचित्तयालो,

सुधिर आत्मिक धर्मने पामी शकतो नथी पुद्गल  
परिणति पोते जड एटले अचेतन छे अने चलके०  
उत्कृष्टि असख्यात समयधी वधीरे स्थितिवाली  
नथी चली अनता जीवोण अनता पुद्गल द्रव्यने  
अनती वार लीधा अने विष्टा मूत्र रस रुधिर मांस  
मेद अस्थि मज्जा वीर्यादिरुपणे परिणमाव्या अने  
वारवार मृतरुपणे छाड्या तो एवी अधिर परिण-  
तिना पाछल जे जीवो लाग्या ते केम धिरता पामे ?  
अने तेनु मन वचन काया निवृत्ति पामे नहि तो  
न आत्मधर्म अने ते वर्मनु निवृत्तिरूप सुख केम  
पामे ? एवी अधिर पुद्गल परिणति पाछल जे लागे  
तेनु धार्थ कपायमान थाय अने शुद्धात्म पुण्यमां  
रति भिरता समाधि पामे नहि ॥ १ ॥

निरमल दर्शन ज्ञान चरणमय आतमारे ॥  
निजपद रमणे प्रगटे पद परमातमारे ॥ पद०  
मोहादिकमा तल्लीन तन्मय ते कह्योरे ॥ शुद्ध  
ब्रह्मामा तल्लीन तिण शिवपद लह्योरे ॥  
तिण० ॥ २ ॥

अर्थ - जो आत्मा पुद्गलद्रव्यनीममता छोड़ी  
 पोतानु स्वरूप जूवे तो निर्मल ज्ञान दर्शन चरणमय  
 पोतेज छे, एम जाणी पररमण छोड़ी शुद्ध स्वरूप  
 रमण करे तो पोतानु परमात्मपद प्रगट थाय जे  
 जीव मोटादिक जे, जे विभाय अगार स्वभावमा  
 जे समय तल्लीन रे ते समय तन्मय ष० ते मय  
 तेने कहीए जेम क्रोधमा तल्लीन थयलो क्रोधमय  
 कहीए, काममा तल्लीन थयलो कामो-काममय  
 कहीए अने शुद्ध धर्ममा तल्लीन थयलो शुद्ध धर्ममय  
 कहीए यत्.-“परिणमदि जेण दव्व, तक्काल  
 तम्मयत्ति पणत्त तह्या धम्म परिणदो, आदा  
 धम्मो सुणयव्वे” ते माटे शुद्धात्म ब्रह्म स्वरूप  
 मा तल्लीन थयलो आत्मा शुद्ध ब्रह्मरूप थाय एटले  
 तेज आत्मा शिवपद पाम्यो कहीए ॥ २ ॥

पुद्गल परिणति भिन्न आरमथी जे सदारे  
 ॥ छोड़ी तास विकल्प रहौ निजगुण मुदारे ॥  
 रहो० ॥ तप सजम मय सहज भाव निज  
 ध्याईए रे ॥ निर्मल ज्ञानानन्द परम पद

इए रे परम० ॥ ३ ॥

अर्थः-पुद्गल परिणति सर्वे काले अत्माधी  
 व्रज छे आत्मानां अने पुद्गल परिणतिनां भिन्न  
 क्षण जाणा पुद्गल परिणति सबधीनो शुभाशुभ  
 कल्प तथा तेना शुभाशुभपणाना आलाप तथा  
 अर्थे शुभाशुभ क्रिया छोडो निजात्म गुणमाटे  
 मोदित रहो आत्मा निर्मल निज स्वरूप जाणी  
 पुद्गल ममता छोडे तो पुद्गल भोगोनी ईच्छा न  
 आय अने पोताना ज्ञान दर्शन चरणमय स्वरूपमा  
 वृत्त रहे तो ते आत्मा तप रूपज छे अने पोताना  
 शुद्ध स्वरूपने सदा अखंड उपयोगमा राखे ना  
 आत्मा पोतेज सजम रूप छे एहयो तप मजममय  
 उपाधि रहित आत्मिक महज भाव अखंड समय  
 ध्याईए तेधी निर्मल ज्ञानानदमय पोतानु म्यंत्र  
 परम पद धामीण ॥ ३ ॥

स्याद्वादमय शुद्ध प्रभु मुख देशनारे ॥  
 सन्माने ते करे विभाव प्रवेश ना रे ॥  
 विभाव० ॥ जिनवाणी सन्मान विना भय  
 वास छे रे ॥ पर परिणति सन्मान कर्म श्रु



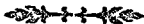
पास छे रे ॥ कर्म० ॥ ४ ॥

अर्थ:-प्रभु मुखनी स्यादुवादमय शुद्ध देशना  
 द्वे के जेथी शुद्ध साध्य अने साधना साक्षात्कार  
 जणाई शके ते ते आज्ञाने जे भवि घट्ट सन्माने  
 आदरे ते घणादि रागादि विनापमां प्रवेश कर नहि  
 ज्यासुधी जिन घचननु सन्मान आयु नयी त्या-  
 सुधी दुखे भरेलो भगवान कायम ते अने पर-  
 परिषति सन्माने पटले परग्रहणेज थाटे कर्मनां  
 पास छे ॥ ४ ॥

आत्म शक्ति स्वतंत्र लयो जिन वाण-  
 धीरे ॥ सावो शिव मग शुद्ध शुभल द्रव  
 ध्यानधीरे ॥ शुभल० ॥ शुद्ध नये लखि  
 द्रव्यने निस्पृह अन्वधीरे ॥ समभाये निज  
 ध्यान तसु भव भय नथीरे ॥ तसु० ॥ ५ ॥

अर्थ:-आत्म शक्ति परतंत्र नयी पण पोते  
 आत्म शक्ति जाणी नथी त्यासुधी पुटगत ममत्व  
 पक्षे पोते अन्त परतंत्रता भोगवे ते इत्थे अन्तर  
 मख्यो माट जिन-वग्ना स्यादाद उपदेशधी आत्म

चिना हृदयमा धारो अने परद्रव्य उपरनो राग द्वेष  
 छोडी ज्ञान दर्शन चरणादिकमा सम एटले सुघो  
 राग द्वेषनी मरोड अने चपलता वगरनो स्थिर  
 भाव राखी आत्म शुद्धतानो अनुभव रस चाखो  
 आत्म शुद्धतानो स्वाद चाखवानो-रस लेवानो  
 अभ्यास वधारवो ते अनुभव करीए ज्यासुधी  
 पुद्गलीक स्वादनो अनुभव करीए त्यासुधी शुद्धा-  
 त्म अनुभव आवे नहि माटे पुद्गलीक अनुभव  
 अधिर अहितकारी जाणी तर्जा आत्म शुद्धता रस  
 लेवानो अनुभव अभ्यास करो साध्य निरपेक्षपणे  
 जे जे वचनो होय ते तीर्थकरोना अथवा तो  
 जानीउना नथी माटे तीर्थकरोना वचन परखवा  
 माध्य सापेक्षतानो विचार हृदयधी चूकवो नहीं  
 देवोमां चद्रमा समान स्पदन जिनेश्वरना वचनामृत  
 रस पाननी उत्तम सेवा मनसुखे आदरे ते शिव-  
 त्रियनो स्वामी धाय अने तेने काई प्रकारनी उणता  
 रहे नहि अने अमाप सुखमा शाश्वत घरवास  
 करे ॥ ७ ॥

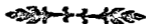


विना समभाव सहित ज्ञान, ध्यान अने क्रिया तेज  
 साचा मोक्ष हेतु ते ज्ञान दर्शन चरणानु विषमपणु  
 टाली सम अने थिरपणु साधवु द्वे एवो शूद्र  
 साध्य जाण्या विनानी शून्य क्रिया कष्टी मोक्षपद  
 नथी अने समभाव तो परग्रहण बुद्धि तजवाधी  
 आवे माठे परग्रहण बुद्धि तर्जा परद्रव्यादिथी  
 निस्पृह धई मुक्तिगुण रागीण तोज समभाव आवे  
 अने सकल कार्ये मिद्ध धाय एम स्पदनजिन देवे  
 परम उपकार बुद्धिए उपदेश्यु ते हमारा सरग्ना  
 भविउ उपर तेमनो परम उपकार द्वे ॥ ६ ॥

शुद्ध साध्य सापक्ष सुनय वाणी लखारे ।  
 समभावे शुद्धात्म अनुभव रस चखारे ॥  
 अनुभव० ॥ देवचद्र प्रभु वचन मृत रस  
 पानमारे ॥ मनसुख शिवघर वास सुख  
 अमानमारे ॥ सुख० ॥ ७ ॥

अर्थ - तीर्थकरोनी वाणी शुद्ध साध्य सापेक्ष  
 ताए होय द्वे तो परमेश्वरनी वाणी शुद्ध साध्य  
 सापेक्षताए सुनये जाणो णटले एकात नयनी खेंध

चिना हृदयमा धारो अने परद्रव्य उपरनो राग द्वेष  
 छोडी ज्ञान दर्शन चरणादिकमा सम एटले सुधो  
 राग द्वेषनी मरोड अने चपलता वगरनो स्थिर  
 भाव राखी आत्म शुद्धतानो अनुभव रस चाखो  
 आत्म शुद्धतानो स्वाद चाखवानो-रस लेवानो  
 अभ्यास वधारयो ते अनुभव कहीण ज्यासुधी  
 पुद्गलीक स्वादनो अनुभव करीए त्यासुधी शुद्धा-  
 त्म अनुभव आवे नहि माटे पुद्गलीक अनुभव  
 अथिर अहितकारी जाणी तजी आत्म शुद्धता रस  
 लेवानो अनुभव अभ्यास फरो साध्य निरपेक्षपणे  
 जे जे वचनो होय ते तीर्यकरोना अथया तो  
 ज्ञानीउनां नथी माटे तीर्यकरोना वचन परस्वचा  
 माध्य सापेक्षतानो विचार हृदयधी चूकवो नहीं  
 देवोमां घट्टमा समान स्पदन जिनेश्वरना वचनामृत  
 रस पाननी उत्तम सेवा मनसुखे आदरे ते शिव-  
 त्रियनो स्वामी धाय अने नेने काई प्रकारनी उणता  
 रहे नहि अने अमाप सुखमा शाश्वत घरवास  
 करे ॥ ७ ॥



॥ अथ चउविंशतिम सप्रति जिन स्तवन ॥

सप्रति जिनवर पद नमी भवि घ्यावोरे ॥  
साधो शुद्ध निज साध्य परम पद पावोरे ॥  
अतित समय चोवीशमा ॥ भ० ॥ प्रभु सम  
हो निरुपाध्य ॥ प० ॥ १ ॥

अर्थ:-गत चोविंशीना चोविशमा तीर्थवर  
सप्रति जिनवरना पद कमलना नमस्कार करी ह  
भवि जीवो । तमे सिद्ध समान निज शुद्ध साध्य  
ध्याउ, साधना कारक प्रवृत्तिए करीने शुद्ध साध्य  
साधा-सिद्ध करो मन वचन काय त्रणे योग धिर  
करी स्वपरिणति शुद्ध साध्यमा एकत्यपणे लयलीन  
करी निर्मल ध्याने शुद्ध साध्य ध्याउ के जेथी  
शाश्वत परमात्म पद पावो एटले प्रभुजी समान  
उपाधि रहित धाउ ॥ १ ॥

शुद्ध साध्य जाणथाविना भवि० ॥ साध्या  
साध्य अनेक ॥ प० ॥ आणा विण निज  
छद्दयी भवि० ॥ सुख पाम्यो नहि छेक ॥  
प० ॥ २ ॥

अर्थः-शुद्ध साध्य जाण्याविना असाध्य एहची पुढुगल परिणति जे स्त्री, पुरुष, सतान, लोही, वीर्य, हाड, मास, धन आदि साधवाने अनेक प्रकारे श्रम करया मन वचन बल बुद्धि प्रवर्त्ताची पण ते पुढुगल परिणति आपणे चश धई नहि तेथी कर्म बध करो चार गति ससार कंतारमा भम्यो दुःख मह्या अने मोक्ष साधवा स्वछदताए अने जिन वचन आजाण पुरुषोना कह्या प्रमाणे घणाण जिया रुष्ट करयां अने जिन मार्गमां कह्या प्रमाणे पण साध्य शुन्य एकाते क्रिया साधी तेथी केवल ससार सवायो अने निवृत्ति रूप साचु सुख लेश पण पाम्यो नहि ॥ २ ॥

स्याद्वाद प्रभु वचनथी भवि० ॥ लहि शुद्धात्म साध्य ॥ परम० ॥ शुद्ध साधना सेवतां भवि० ॥ नाशे सर्व उपाधि ॥ परम०३॥

अर्थः-प्रभुजीना स्याद्वादमय वचन साभली शुद्धात्म साध्य जाणीशुद्ध साधना सेविण-साधीए तो सकल कर्म उपाधि नाशे ॥ ३ ॥

॥ निर्मल साध्य स्वरूप ए भवि० ॥ मुज  
सत्तागत एम ॥ परम० ॥ शुद्ध ध्येय निज  
जाणिने भवि० ॥ घ्यातां शिवपद क्षेम ॥  
परम० ॥ ४ ॥

अर्थ-जेवु प्रभुजीनु शुद्ध स्वरूप छे तेवुज  
महारु निर्मल साध्य साहरी सत्तागते छे ते साधि  
प्रगट् वगति भावमा लायवु एज उभेद करो पो  
तानो शुद्ध ध्येय जाणीने यथार्थ साधकतापणे  
याईए तो क्षेमकुशले शिवपद पासीए ॥ ४ ॥

ए विण अवर न साध्य छे ॥ भ० ॥  
सुखकारण जगमाहि ॥ परम० ॥ शुद्ध ध्येय  
निज साधवा ॥ भवि० ॥ साधन शुद्ध  
उछाहि ॥ परम० ॥ ५ ॥

अर्थ-सिद्ध समान निर्मल आत्म साध्य  
शिवाय परम स्वतंत्र सुखनु कारण जगत्मां बीजु  
काई साध्य नथी अने माह द्रष्टिण जगत्मां जे जे  
रूपी साध्यो जणाय छे ते सर्वे परतत्रता अनिवृत्ति  
चपलता सभ्यता आदि दुःखना कारण छे एम

जाणवु निज शुद्ध ध्येय साधवा आत्मबोधे फरीने  
 शुद्ध साधनामा मने उच्छाह ते धने संव भव्यो  
 पण एम उच्छाह उमग राखो ॥ ५ ॥

रत्नत्रयी विणु साधना ॥ भवि० ॥ निष्-  
 फल जाण सदाय ॥ परम० ॥ रत्नत्रयी शिव  
 साधना ॥ भवि० ॥ साधि भवि शिव पाय  
 ॥ परम० ॥ ६ ॥

अर्थ:-आत्मज्ञान आत्मदर्शन आत्म स्वभावा-  
 चरण ए त्रणेन रत्नत्रय कहीण एधी भिन्न अन्य  
 साधना सदाय निष्फल जाणवी जेम खसवाले  
 न्वजोलीने सुग्व मानी लोतुं पण एणे काई सुग्व  
 साध्यु नधी. आत्माना आत्माधी अभेदपणे रहेला  
 ज्ञानदर्शनचरण गुणो ते अज्ञान मिध्यास्व थने  
 मोह वशे मलिन थणला छे ते अतिचार टाली  
 ज्ञानदर्शन चरण आराधी निर्मल करवा एज रत्न-  
 त्रय मोक्ष साधना साधि भविजीवो मोक्ष पामे  
 छे ॥ ६ ॥

शुद्धात्म जाण्या विना ॥ भवि० ॥ परपद



ममत्त उपाय ॥ परम० ॥ रागादिक वश जीव  
 ष ॥ भवि० ॥ कीधा अनेक अपाय ॥  
 परम० ॥ ७ ॥

अर्थ:-ज्यासुधी आत्म शुद्धता जाणी नथी  
 त्यासुधी परपदमा ममत्त उपजे ते तेथी राग द्वेष  
 मोहादि वश थई जीवे पाताने अनत दृग् उपजे  
 एहवा उपाय खडा करया ॥ ७ ॥

तुज वाणिर्था में लह्या ॥ भवि० ॥ निज  
 गुण द्रव्य प्रजाय ॥ परम० ॥ पर गुण द्रव्य  
 प्रजायनु ॥ भवि० ॥ ममत्त तजे सुख थाय  
 ॥ परम० ॥ ८ ॥

अर्थ -तमारी वाणी वडे पर द्रव्य गुण पर्या  
 यथी भिन्न निज द्रव्य गुण पर्याय जाण्या तथी  
 जाणु छु के पर द्रव्य गुण पर्यायनु ममत्त तजवा-  
 थीज सर्वे दुष्ट अपायो नाश थई स्वतंत्र सुख प्राट  
 थशे ॥ ८ ॥

जाण्यु आत्म स्वरूप में ॥ भवि० ॥ वलि  
कीधु निरधार ॥ परम० ॥ चरण निज गुण  
रमणमां ॥ भवि० ॥ तजि पर रमण प्रचार  
॥ परम० ॥ ९ ॥

अर्थ:-मे आत्मस्वरूप जाण्यु अने सिद्धात,  
नयो, प्रमाणो अने माहरी दुद्विवडे निरधार कर्यु  
हवे पर रमणनो चालो तजी शुद्ध स्वभावाचरणो  
निज गुण रमण करु ए माहरी इच्छा ठे ॥ ० ॥

धीर वीर निज वीर्यने ॥ भवि० ॥ राखी  
अचल गुण टाम परम० ॥ परसगे चल नवि  
करू ॥ भवि० ॥ नहि परथी निज काम ॥  
परम० ॥ १० ॥

अर्थ:-धीर वीर धई निजात्म वीर्यने स्वस्व भा-  
वमा स्थिर राखी एटले ज्ञान दर्शनादि निज गुण  
स्थानवमा वीर्य अचलपणे राखी पुद्गलादि परसगे  
वीर्य चलायमान करु नहीं केमके माहर परद्रव्यथी  
फाई काम नथी हे मोक्षाभिलाषी भव्यो ! तमे सर्वे

एज प्रमाणे शुद्ध साध्य साधो धीर पुरुषोन्नो एज  
मार्ग छे विषय कषायादिके धैर्य राखी सकता नथी  
ते शिवमार्ग शी रीते साधी शके ? माटे धैर्य अचल  
राखवु एज श्रेय छे ॥ १० ॥

पुद्गल खल सगे करयु ॥ भवि० ॥  
आत्म वीर्य चल रूप ॥ परम० ॥ जड सगे  
दुःखीउ थयो ॥ भवि० ॥ थइ बेठो जड भूप  
परम० ॥ ११ ॥

अर्थ:-जीवोण अचेतन जड एहर्षा खल पुद्गल  
सगे आत्म वीर्य चल करयु तेथी जड पुद्गलोमां  
मली जडतावत् जड थई बेठा तेथी अन अधिकारी  
छतां जड पदार्थीना अधिकारी-भूप राजा थई बेठो  
तेथी महान् दुःखीउ थयो ॥ ११ ॥

दर्शन ज्ञान चरण सदा ॥ भवि० ॥ आ-  
राधो तति दोष ॥ परम० ॥ आत्म शुद्ध  
अभेदी ॥ भवि० ॥ लहिये गुण गण पोष ॥  
परम० ॥ १२ ॥

अर्थ:-दरशन ज्ञान अने चारित्र्ये ए त्रणेना  
आठ आठ दोष अने प्रमाद तजी सदा आराधो  
आत्मअंगना अने आत्मगुणना व्यग्रहारधी ज्ञान  
दर्शन चारित्र्य एहवा मुरय त्रण भेद छे अने निश्चय  
धी आत्म रत्नत्रयधी अभेदपणे एकज छे एम त्रणे  
गुणो आत्माधी अभेदपणे ध्याईए तोज निविक्ल्प  
ध्यान अने अनत निर्मल गुणोना पुष्ट आनंद आचे।११।

दरशन ज्ञान विराधना ॥ भवि० ॥ ते-  
हिज भव भय मूल ॥ परम० ॥ निज शुद्ध  
गुण आराधना भवि० ॥ ए शिव पद अनुकूल  
॥ परम० ॥ १३ ॥

अर्थ -दरशन ज्ञान चरणमय आत्मगुण विरा-  
धना तेज कर्मधनु कारण अने भव भवनु मूल छे  
आत्माधी प्रतिकूल छे, पूर्वापर हितकारी नधी अने  
दरशन ज्ञान चरण आदि शुद्धात्म गुणनु आराधवु  
एज शिवमार्ग अनुकूल छे तो मुरय ए भाव हृदय  
मा धारो, एज साध्य जाणी एनी प्रशस्तताए क्रिया  
आदरधी अने ए साध्यधी अप्रशस्त पणे जे क्रिया  
होय ते तजवी ॥ १३ ॥

॥ कलस ॥ हरिगीत छंद ॥

गत समयना चौबीश जिननी स्तवन चौबीशी  
 करी । मुनि देवचंद महत हितकर सार जश फीरती  
 बरी ॥ द्रव्यानुयोग गभीर एहनो अर्थ जन सुगुरा  
 लहे । मतिमद न लहे अर्थ एहनो साध्य शून्य  
 क्रिया चहे ॥ १ ॥ में तनुमती इह अर्थ कीधो यथा-  
 शक्ति प्रमाणमा ॥ घट्ट सूत्र अर्थ प्रमाण जोई भय  
 हेजो ध्यानमा । उत्सूत्र दोष दुरे करीने स्यादवाद  
 सुनय रसे । जे आदरे जिन घचन ते निज आत्म  
 अनुभव रस वसे ॥ २ ॥ एकवीश स्तवनो हाथ  
 लाध्या तीन स्तवन मल्या नही । चाबीशमा शिव  
 कर श्री जिनथी स्तवन में रचिया सही । शुष नय  
 निक्षेप प्रमाण युक्ते अर्थ एह विचारिये । उपयोग  
 शुद्धे धीर बुद्धे दुष्ट परिणति वारिये ॥ ३ ॥ शृद्धात्म  
 परिणति आदरी उपयोग धिरता राखिये ॥ निज  
 ज्ञान दरशन अरण्य वीरज सुमति अनुभव चाहिये ।  
 उगलीश पासठ फाल्गुणे सुदि पुनम इहु निरमलो  
 मन रगश ए अर्थ करता आत्मगुण लह्यो ऊजलो  
 ॥ ४ ॥ जिन आणसगी तत्त्व रगी भव्यना आग्रह  
 बडे । दाहोद नगरे अर्थ कीधो भव्य धर्म रसे चडे ।

दृष्यानुरोग दुरे करे सवि पाप ताप संतापने । शिव  
 भग "मनसुख" रग विलसे लही धाप प्रतापने ॥५॥

( संपूर्ण )



॥ कलस ॥ हरिगीत छंद ॥

गत समयना चौवीश जिननी स्तवन चौवीशी  
 करी । मुनि देवचंद मर्हत हितकर सार उश कीरती  
 वरी ॥ इव्यानुयोग गभीर एहनो अर्थ जन सुगुरा  
 लहे । मतिमद न लहे अरथ एहनो साध्य शून्य  
 क्रिया चहे ॥ १ ॥ मे तनुमती इह अर्थ कीधो यथा-  
 शक्ति प्रमाणभा । बहु सूत्र अथ प्रमाण जोई भव्य  
 सेजो ध्यानमा । उत्सुत्र दोष दुरे करीने स्यादवाद  
 सुनय रसे । जे आदरे जिन वचन ते निज आत्म  
 अनुभव रस वसे ॥ २ ॥ एकवीश स्तवनो हाथ  
 लाध्या तीन स्तवन मल्या नहीं । चावीशमा शिव  
 कर श्री जिनथी स्तवन में रचिया सही । शुध नय  
 निक्षेप प्रमाण युक्ते अर्थ एह विचारिये । उपयोग  
 शुद्धे धीर बुद्धे इष्ट परिणति चारिये ॥ ३ ॥ शृद्धात्म  
 परिणति आदरी उपयोग धिरता राखिये ॥ निज  
 ज्ञान दरशन चरण वीरज सुमति अनुभव चाहिये ।  
 उगणीश पासठ फाल्गुणे सुदि पुनम इहु निरमलो  
 मन रगश ए अर्थ करता आत्मगुण लह्यो ऊजलो  
 ॥ ४ ॥ जिन आणसगी तत्त्व रगी भव्यना आग्रह  
 बडे । दाहोद नगरे अर्थ कीधो भव्य धर्म २ ॥

द्रव्यानुरोग दुरे करे सवि पापं ताप संतापने । शिव  
अग "मनसुख"रग विलसे लही आप प्रतापने ॥५॥

( सपूर्ण )

